तिरुमल तिरुपति देवस्थान

सप्तगिरि

सचित्र मासिक पत्रिका

मई-2020 रु.5/-

श्रीरामनवमी के अवसर पर ओंटिमिट्टा, श्री कोदंडरामस्वामी के मंदिर में दि. ०७-०४-२०२० को
संपन्न श्री सीताराम कल्याणोत्सव के दृश्य। कोरोना वायरस पंजा के कारण
अर्चकगण एकांत रूप में इस कल्याण महोत्सव को आयोजित किया।

अपर्याप्तं तदस्माकं बलं भीष्माभिरक्षितम्।
पर्याप्तं त्विदमे तेषां बलं भीमाभिरक्षितम्।।
(- श्रीमद्भगवद्गीता १-१०)

भीष्मपितामह द्वारा रक्षित हमारी वह सेना सब प्रकार से अजेय है और भीम द्वारा रक्षित इन लोगों की यह सेना जीतने में सुगम है।

गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यैः शास्त्र विस्तरैः।
या स्वयं पद्मनाभस्य मुख पद्माद्विनिस्सृता।।
(- गीता मकरंद, गीता का प्रभाव)

गीता का गान एवं पठन ज्यादा करना चाहिए। अन्य अनेक शास्त्रों से क्या प्रयोजन? क्योंकि गीता शास्त्र स्वयं भगवान विष्णु के मुख कमल से निकला है।

गतांक से

श्री रामानुज नूट्रन्दादि

मूल - श्रीरंगामृत कवि विरचित

प्रेषक - श्री श्रीराम मालपाणी
मोबाइल - ९४०३७२७९२७

इरैञ्जप्पडुम् परनीश नरंगनेन्नु, इव्वुलहत्तु

अरम् शेप्पु मण्ण लिरामानुजन्, एन्नरुविनैयिन्

तिरम् शेत्तिरवुम् पहलुम् विडादेन्तन् चिन्तैयुळ्ळे

निरैन्दोप्पर विरुन्दान्, एनक्कारुम् निहरिल्लैये ॥४७॥

सर्वात्मभिर्नन्तव्यः परमपुरुषः श्रीरंगनाथ एवेति परमार्थमनुगृहीतवान् भगवान् रामानुजो मदीयकर्मग्रन्थिविनाशर्पूवकं दिवारात्रमविच्छेदेन मम हृदि परिसमाप्य वर्तते। ततश्चाहमस्मि निरस्तुलः॥

इस भूमंडल पर इस साक्षात् परमधर्म का उपदेश करनेवाले कि, ''सब के प्रणम्य परदेवता साक्षात् श्रीरंगनाथ भगवान ही हैं'', सर्वस्वामी श्रीरामानुजस्वामीजी मेरा प्रबल पापसमूह मिटा कर, मेरे हृदय में ही ऐसे दिनरात अविच्छिन्न विराजमान हैं कि मानों आप और कहीं रहते ही नहीं। अतः दूसरा कोई मेरे सदृश (भाग्यवान) नहीं है। (विवरण- श्रीरामानुज स्वामीजी इस भूतलपर निवास करनेवाली जनता को यह उपदेश देते हैं कि, ''श्रीरंगनाथ भगवान ही असली परदेवता हैं, अतः उन्हींको प्रणाम कीजिए'', ऐसे महामहिम वे मेरे मन में अहोरात्र, विना विच्छेदके निवास कर रहे हैं। इससे मेरे सभी प्रबल पाप नष्ट हो गये। इस प्रकार इस संसार मंडल में उनकी विशेष कृपाका पात्र भूत व्यक्ति मेरे सिवा दूसरा कोई नहीं है।

श्रीरामानुज स्वामीजी उपदेश देते हैं कि, श्रीरंगनाथ भगवान ही असली परदेवता हैं, अतः उन्हींको प्रणाम कीजिये।

क्रमशः

50 सप्तगिरि

1970 — 2020

तिरुमल तिरुपति देवस्थान की सचित्र मासिक पत्रिका

वेङ्कटाद्रिसमं स्थानं
ब्रह्माण्डे नास्ति किञ्चन,
वेङ्कटेश समो देवो
न भूतो न भविष्यति।

वर्ष-५० मई-२०२० अंक-१२

गौरव संपादक
श्री अनिलकुमार सिंघाल, आई.ए.एस्.,
कार्यनिर्वहणाधिकारी, ति.ति.दे.

प्रधान संपादक
डॉ.के.राधारमण

संपादक
डॉ.वी.जी.चोक्कलिंगम

उपसंपादक
श्रीमती एन.मनोरमा

मुद्रक
श्री आर.वी.विजयकुमार, बी.ए., बी.एड्.,
उपकार्यनिर्वहणाधिकारी,
(प्रचुरण व मुद्रणालय),
ति.ति.दे. मुद्रणालय, तिरुपति।

स्थिरचित्र
श्री पी.एन.शेखर, छायाचित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।
श्री बी.वेंकटरमण, सहायक चित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।

विषयसूची

सनातन हिंदू धर्म प्रचार में 'सप्तगिरि' मासिक पत्रिका	डॉ.जी.मोहन नायुडु	07
श्रीबालधन्वी गुरु (इलयविल्ली)	श्री प्रणव पी.अगर्वाल	10
श्री किडाम्बि आच्चान्	श्री अनुज कुमार अगर्वाल	11
श्री मधुरकवि स्वामीजी	श्रीमती सरोज. भट्टड	14
श्री अनंताल्वान स्वामीजी	श्रीमती ललिता सम्पत. रांदड	17
नडातुर अम्माल	श्री अजय कुमार. सरफ	22
भारतीय दर्शन और श्री हनुमान	आचार्य वाई.वेंकटरमण राव	24
श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी (तिरुक्कोष्टियूर नम्बी)	श्रीमती लक्ष्मीनिवास कब्रा	31
शरणागति मीमांसा	श्री कमलकिशोर हि. तापडिया	35
अन्नमय्या के जीवन का इतिहास	श्रीमती पी.सुजाता	37
भागवत कथा सागर पुंसवन व्रत	श्री अमोघ गौराँग दास	41
हरिदास वाङ्मय में श्रीवेंकटाचलाधीश	डॉ.एम.आर.राजेश्वरी	43
यह पृथ्वी कर्मों का स्थान है!	श्री अमोघ गौराँग दास	45
श्री पेरुंदेवी समेता श्री करिवरदराज स्वामी मंदिर - सत्रवाडा	श्री के.रामनाथन	47
श्री प्रपन्नामृतम्	श्री रघुनाथदास रान्दड	49
धर्म प्रचार में 'सप्तगिरि' मासिक पत्रिका का योगदान	श्री एम.अजित शर्मा	51
आइये, संस्कृत सीखेंगे...!!	डॉ.सी.आदिलक्ष्मी	52

मुखचित्र
सुनरो भाग्य की विष्णु कथा!

चौथा कवर पृष्ठ
श्री वेंकटेश्वरस्वामी की सन्निधि में वेंगमांबा।

सूचना
मुद्रित रचनाओं में व्यक्त किये विचार लेखक के हैं। उनके लिए हम जिम्मेदार नहीं हैं। — *प्रधान संपादक*

अन्य विवरण के लिएः
CHIEF EDITOR, SAPTHAGIRI, TIRUPATI - 517 507.
Ph.0877-2264543, 2264359, Editor - 2264360.

website: www.tirumala.org or www.tirupati.org
वेबसैट के द्वारा सप्तगिरि पढ़ने की सुविधा पाठकों को दी जाती है। सूचना, सुझाव, शिकायतों के लिए - sapthagiri_helpdesk@tirumala.org

जीवन चंदा .. रु.500-00
वार्षिक चंदा .. रु.60-00
एक प्रति .. रु.05-00
विदेशियों को वार्षिक चंदा .. रु.850-00

सप्तगिरि 'स्वर्णोत्सव' के शुभ अवसर पर...

आदमी का जीवन लौकिक तथा पारलौकिक (आध्यात्मिक) नामक दो बैलों से चलनेवाली गाड़ी के समान है। जब तक इनमें संतुलन न हो, तब तक जीवन में सुख व शांति नहीं होती। लौकिक जीवन के लिए धन की आवश्यकता है। इसके साथ-साथ भगवान के प्रति प्रेम तथा पाप के प्रति भय जैसे भावों की मानसिकता की भी आवश्यकता होती है। दूसरों के प्रति हमारे व्यवहार तथा हृदय में प्रेम, क्षमा तथा करुणा का होना आवश्यक है। खग के दोनों पंख उडान में महत्व रखते हैं। गाड़ी के दोनों पहियों की चलन शक्ति में संतुलन की अनिवार्य जरूरत होती ही है। आध्यात्मिक तथा लौकिक चिन्तन में समानता जीवन को सार्थक बनाती है। इस विषय से बोध कराने के लिए निश्चित रूप से एक साधन या उपाय की आवश्यकता होती है। ऐसा साधन ही निस्संदेहात्मक रूप से 'सप्तगिरि' मासिक पत्रिका है। इसे कहने में न कोई संकोच है और ना ही इस उक्ति में अतिशयोक्ति है।

दूसरों के हित के लिए प्रस्तुत हर शब्द 'साहित्य' कहलाता है। अनुभवी लोगों से कहे जाने वाले शब्द- 'सामाजिक वृद्धि ही पारमार्थिक वृद्धि है' - इन शब्दों का अक्षरसाक्षी 'सप्तगिरि' पत्रिका है। जगत्कर्त्ता सप्तगिरीश की लीला विभूति को हर घर के दहलीज तक पहुँचाती है 'सप्तगिरि'। भगवान ने स्वयं कहा था - 'अक्षरानां अकारोस्मि'। इस उक्ति को सत्य बनाने के लिए अक्षरों में भगवान बालाजी की शक्ति को स्थापित पर पत्रिका के हर पृष्ठ को स्वामी के चरणकमलों की आराधना में समर्पित की जा रही है। इस प्रसाद को पचास वर्षों से निर्बाध घर-घर तक पहुँचा रही है।

भक्तों के लिए तिरुमल की यात्रा आनंद, दिव्यानंद, परमानंद का अनुभव प्रदान करती है। यात्रा के प्रारंभ से लेकर, वापस पहुँचने तक यात्रीगण 'गोविन्द' का नामस्मरण निरंतर करते ही रहते हैं। 'कलौस्मरणा सूक्तिः' - कलियुग में भगवान का स्मरण ही भव तारक मंत्र है। श्रीवेंकटेश प्रभु नामस्मरण के द्वारा ही सभी भक्तों को भवसागर को पार करने की शक्ति प्रदान कर रहा हैं। हम तो लेकिन मानव हैं, भवबंधनों से 'मायाजाल' से इतनी आसानी से मुक्त नहीं हो पाते हैं। इसलिए भगवान स्वयं हमारे दुःखों को मिटाने का दायित्व स्वयं वहन करते हैं। यात्रीगण जब तीर्थाटन पूरा करके घर वापिस लौटते हैं, तब सप्ताचलाधीश 'सप्तगिरि' के रूप में उनके साथ चलते हैं। सप्तगिरीश, भक्तों के हाथों में 'सप्तगिरि' को पकडवाकर, उनसे 'गोविन्दा' का नामोच्चारण स्वयं करवाता है। यह है उस सघन मूर्ति का कृपा कटाक्ष।

पत्रिका के रंगीन चित्र, भक्तों में स्वामी को अतिनिकट से दर्शन करने की अनुभूति कराती है। पंडितों के द्वारा लिखे गये आलेखों को आमूलाग्र पढ़ने के लिए बाध्य करती है। संदर्भोचित विषयों का समुचित चयन कर उनको छापना इस पत्रिका की विशिष्टता भी है। इस पत्रिका के प्रकाशन के लिए जितने लोग दायित्व उठाते हैं, वे सभी इसे दैवीय कार्य मानकर, एक प्राप्त सुअवसर मानकर, कृपासिंधु में गोते लगाते परमानंद अनुभव करते हैं।

भक्तों के अनुभव, अधिकारियों के सुझाव, भक्तों की समस्याओं का समाधान, तिरुमल यात्रा के लिए आवश्यक सूचनाएँ एवं मार्ग दर्शन, भगवान को समर्पित कैंकर्य, उत्सव की विशिष्टताएँ, मंदिर में संपन्न विशेष तबादले, हरेक मास की विशिष्टता आदि, सप्तगिरि में अपने लिए आप जगह ढूँढ़कर पैठ जाते हैं। इसलिए पाठक इसे पढ़ने के लिए उत्साह दिखाते हैं। 'सप्तगिरि' अपने आप में एक अद्वितीय, विशेष पत्रिका है, वेंकटाचलपति की लीला तरंगिणि है, भक्तों के भावों को वहन करने वाली अमूल्य निधि है।

अस्तु

सनातन हिंदू धर्म प्रचार में 'सप्तगिरि' मासिक पत्रिका

तेलुगु मूल - डॉ.के.राधारमण,
प्रधान संपादक, ति.ति.दे., तिरुपति।

हिन्दी अनुवाद - डॉ.जी.मोहन नायुडु
मोबाइल - ९४४१४८०४७३

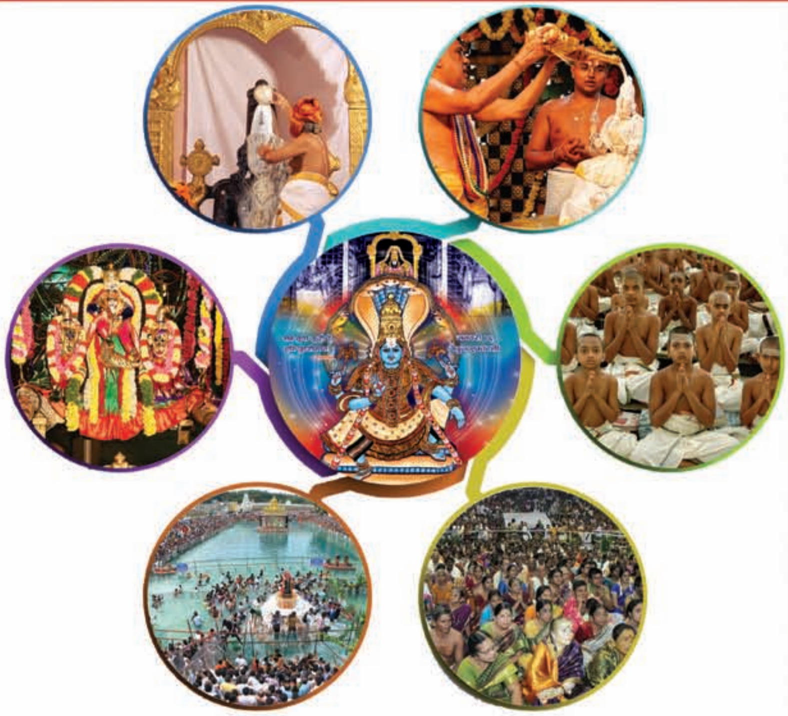

सद्व्यवहार, सदाचार, धर्माचरण जैसे विषयों से जनता को प्रेरित करके उनको आगे बढाने में धार्मिक पत्रिकाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है। धार्मिक पत्रिकाओं में तिरुमल तिरुपति देवस्थान के द्वारा प्रकाशित 'सप्तगिरि' मासिक पत्रिका का एक विशिष्ट स्थान है। अब हम 'सप्तगिरि' धार्मिक पत्रिका के इतिहास के बारे में जानेंगे।

शेषाचलपति श्रीनिवास (भगवान बालाजी) के दर्शनार्थ भारत के कोने-कोने से आनेवाले हजारों यात्रियों के लिए देवस्थान के द्वारा आयोजित सुविधाओं के बारे में भक्तों को जानकारी देने के साथ-साथ तिरुमल क्षेत्र-महिमा, पौराणिक और वेद विज्ञान से परिचित कराकर आस्तिकों में आध्यात्मिक विकास के लिए १९४९ में तिरुमल तिरुपति देवस्थान ने एक प्रचार प्रसार साधन का श्रीगणेश किया। उसी के फलस्वरूप १९४९ में करपत्र के रूप में एक पत्रिका निकली। उस समय यह पत्रिका एक प्रचार साधन के रूप में थी और इसका नाम 'देवस्थान बुलेटेन' रखा गया। यह श्री वेंकटेश्वर (बालाजी) के सेवाकार्यक्रम में दिन प्रतिदिन विकसित होते हुए देवस्थान समाचार के प्रचार-प्रसार के साथ-साथ अनेक विद्वानों के सहयोग से १९६१ तक उत्तम आध्यात्मिक साहित्य से विकसित हुई। इसी समय श्री वेंकटेश्वर प्राच्य शोध संस्थान तिरुमल तिरुपति देवस्थान के अधीन रहने के कारण अनेक विद्वानों की प्रशंसाएँ आलेखों के रूप में प्रस्तुत करके पत्रिका के लिए आवश्यक कार्य योजनाएँ तैयार की गयी।

जिस प्रकार एक पौधा पेड के रूप में और फल, पुष्प के रूप में विकसित होना स्वाभाविक है उसी प्रकार पत्रिका का भी विकास हुआ। इसको केवल तिरुपति तिरुमल यात्रा का विवरण देनेवाली पत्रिका के रूप में ही न रखकर एक महोज्ज्वल आध्यात्मिक प्रचार-प्रसार चिह्न के रूप में तैयार करने की संकल्पना १९६१ में ही की गयी। यह 'बुलेटेन' पत्रिका 'देवस्थान मासिक पत्रिका' नाम से समाचार पत्रों के नियमानुसार १९६१ में ही निकली और इसके लिए १९६३ में एक

संपादक और सहायक कर्मचारियों की नियुक्ति हुई। इससे पत्रिका के विकास के लिए आवश्यक कदम उठाये गये। उस समय पत्रिका की प्रतियों की संख्या ३००० मात्र थी। छोटी-सी आकृतिवाली (१/८ डेम्मी) यह पत्रिका उन दिनों में चंदादारों को देने के साथ-साथ तिरुमल, मद्रास, हैदराबाद, बेंगलूरु में बिकती थी। अंग्रेजी, तमिल, तेलुगु, कन्नड, हिंदी भाषा से संबंधित छोटे-छोटे आलेख इसमें प्रकाशित होते थे।

लक्ष्य की पूर्ति के लिए पत्रिका के अस्तित्व से परिचित होना जनता के लिए अनिवार्य है। इस कार्य योजना के आरंभ में पत्रिका की बिक्री तिरुमल तिरुपति देवस्थान के अधीन उन दिनों में रहनेवाले मंदिरों, धर्मशालाओं और समाचार केन्द्रों में जुलाई १९६६ में प्रारंभ हुई। बिक्री केन्द्र तीन से बारह तक बढाकर बाद में उनकी संख्या को और भी बढाई गयी तथा प्रतियों की संख्या को भी बढाई गयी।

हिंदू धर्म प्रचार, अक्षर विज्ञान प्रसार इस पत्रिका का आशय रहा था। अतः इसकी परिधि का विस्तार होना अनिवार्य रहा। इसलिए पत्रिका की बिक्री अन्य व्यक्तियों के द्वारा अप्रैल १९६७ में आरंभ हुई।

जनवरी १९७० से अंग्रेजी, संस्कृत के साथ रहनेवाली इस पत्रिका से तेलुगु, तमिल, कन्नड, हिंदी भाषाओं की पत्रिकाओं को अलग-अलग करके प्रकाशित की गयी। जिससे यह प्रत्येक भाषा के समस्त प्रांतों की जनता तक पहुँचने में सफलता पायी। यह क्रमानुसार १९६६ से १९७० तक स्थाई रूप से विकसित हुई। जून १९७० में सप्तगिरि अर्थात् सात पहाडों के प्रतीक के रूप में 'बुलेटेन' नाम से जन्म लेकर दिन-प्रतिदिन विकसित होते हुए 'सप्तगिरि' नाम से अवतरित हुई। उस दिन से आज तक इसका इतिहास बहुत प्रशंसनीय रहा है।

पत्रिका का नाम 'सप्तगिरि' रखने के बाद इसमें विशेष परिवर्तन लाया गया। लम्बे समय तक छोटे आकार में रहनेवाली पत्रिका को अप्रैल १९७२ में १/४ क्रउन परिमाण में लायी गयी। अंग्रेजी, संस्कृत और अन्य भाषाओं से युक्त पत्रिका एक साथ प्रकाशित होती थी। लेकिन अंग्रेजी और संस्कृत को सभी पाठकों पर न तोपने के लिए विविध भाषाओं की पत्रिकाओं का उन भाषाओं से संबंधित प्रांतों में विशेष प्रसार में लाने के लिए जनवरी १९७५ से अंग्रेजी भाषा पत्रिका को अलग करके पाँच भाषाओं में अलग-अलग पत्रिकाएँ निकाली गयी। इस पद्धति के द्वारा हर भाषा की 'सप्तगिरि' पत्रिका दूसरी भाषा की पत्रिका से संबंध न रखते हुए पहले ही प्रकाशित होती थी। अगस्त १९७५ में 'सप्तगिरि' पत्रिका १/४ क्राउन से १/४ डेम्मी साइज में परिवर्तित हुई।

'सप्तगिरि' मासिक पत्रिका पाठकों के आदरण से दिन-प्रतिदिन विकसित होते हुए बहुत विस्तृत हो गयी। इसके सिलसिले में अप्रैल २०१४ से संस्कृत में भी पत्रिका प्रकाशित हुई। जनवरी २०१६ से 'सप्तगिरि' पत्रिका छह भाषाओं (तेलुगु, तमिल, कन्नड, हिंदी, अंग्रेजी, संस्कृत) में पूर्ण रंगों से युक्त मासिक पत्रिका के रूप में प्रकाशित हो रही है। केवल ३००० प्रतियों से आरंभ होकर दिन प्रतिदिन विकसित होते हुए आज २००००० प्रतियों के सर्कुलेशन तक पहुँची। आजी बडी मात्रा में प्रकाशित होनेवाली आध्यात्मिक पत्रिका 'सप्तगिरि' है।

'सप्तगिरि' की वृद्धि और विकास के पीछे देवस्थान के कई अधिकारियों का योगदान है इसमें कोई संदेह नहीं है।

'सप्तगिरि' पत्रिका आरंभ से ही भक्ति, धर्म, आध्यात्मिकता, पवित्र क्षेत्रों, देवताओं, त्रिविध मताचार्यों की विशेषताओं, सिद्धान्तों और उनसे समाज की क्या उपयोगिता है? भक्ति के मार्ग, भक्तों का इतिहास, धार्मिक और आध्यात्मिक ग्रन्थों का परिचय आदि विषयों को सरल भाषा में प्रदान कर रही है। इतना ही नहीं तिरुमल तिरुपति देवस्थान के मंदिरों में होनेवाले विशेष उत्सव, पूजाएँ, त्योहारों, आचरण के विधान आदि विशेषताएँ संदर्भ के अनुसार प्रकाशित हो रही हैं।

सप्तगिरि (सात पहाडों), सप्तगिरीश के प्रतीक के रूप में 'सप्तगिरि' पत्रिका का नाम देवस्थान के द्वारा रखा गया। 'सप्तगिरि' नाम सुनते ही सप्तगिरीश (भगवान बालाजी), सप्तगिरियाँ हमारे मन में याद आते हैं। समय के अनुसार भक्ति से युक्त कई पत्रिकाएँ जन्म ले रही हैं फिर भी 'सप्तगिरि' पत्रिका अपने अस्तित्व को बनाये रखते हुए शिष्ट साहित्य से विशिष्ट साहित्य तक आध्यात्मिकता को प्रमुखता देनेवाली पत्रिका के रूप में अवतरित हुई है। बच्चों और वृद्धों को आनंद और जिज्ञासा प्रदान करनेवाली उत्तम पत्रिका है 'सप्तगिरि।'

सप्तगिरि मासिक पत्रिका आरंभ होकर मई २०२० तक ५० वर्ष का समय बीत चुका है। इसके संदर्भ में जनवरी २०२० से इसमें कई परिवर्तन लाये गये हैं। आजके बोये हुए बीज आगामी दिनों में वृक्ष बनेंगे। देश का भविष्य यदि उज्जवल रहना है तो बच्चों में मानवीय मूल्यों को विकसित करना बहुत आवश्यक है। इसलिए इस दिशा में तिरुमल तिरुपति देवस्थान आवश्यक कदम उठा रहा है। विशेषतः बच्चों के लिए 'बालसप्तगिरि' नाम से बीस पृष्ठोंवाली सम्बद्ध प्रति हर मास निकालने का निर्णय तिरुमल तिरुपति देवस्थान ने लिया। दास साहित्य, आल्वार साहित्य, हिन्दू देवताओं, बालनीति, चित्रकथा, क्विज, चित्रलेखन आदि विषयों से युक्त 'बालसप्तगिरि' सरल भाषा में निकल रही है। बालक-बालिकाओं को हमारी संस्कृति के प्रति, धर्म के प्रति, पुराणों के प्रति, भगवान के प्रति, बडों के प्रति अच्छी तरह अवगत कराने के लिए तथा उनमें आध्यात्मिक विचारों को विकसित करने के लिए देवस्थान ने 'बालसप्तगिरि' का आरंभ किया।

अनेक कवियों, रचनाकारों की सृजनात्मक रचनाओं से हमारा आध्यात्मिक क्षेत्र सुसंपन्न होने में उन रचनाओं से संबंधित कवियों, रचनाकारों की भूमिका का साथ-साथ उन रचनाओं को प्रकाशित करनेवाली पत्रिकाओं का योगदान भी महत्वपूर्ण रहा है। रचनाकार के विचारों को लाखों पाठकों तक पहुंचाने में और आज के समाज में धर्म, न्याय जैसे मूल्यों का अस्तित्व बनाये रखने में पत्रिकाएँ भी शत प्रतिशत अपने कर्तव्यों का पालन कर रही हैं। आधुनिकता के इस युग में भी आध्यात्मिक पत्रिकाओं का आदर बडता ही जा रहा है और आध्यात्मिक उन्नति के लिए यह सूचक है। बडी संख्या में आध्यात्मिक पत्रिकाएँ आन्ध्रप्रदेश में प्रकाशित हो रही हैं। इसलिए इन पत्रिकाओं के कारण आन्ध्रप्रदेश आध्यात्मिक केन्द्र के रूप में अवतरित हुआ। इन समस्त आध्यात्मिक पत्रिकाओं में पहला स्थान तिरुमल तिरुपति देवस्थान के द्वारा प्रकाशित होनेवाली पत्रिका 'सप्तगिरि' को मिलता है।

ॐ नमो वेंकटेशाय

श्रीबालधन्वी गुरु (इलयविल्ली)

श्री प्रणव पी.अगर्वाल
मोबाइल - ९४२०३८२५२३

तिरुनक्षत्र : आश्लेषा नक्षत्र, चैत्र मास

अवतार स्थल : कोमाण्डूर

आचार्य : श्रीरामानुज स्वामीजी

परमपद प्राप्त स्थान : तिरुप्पेरूर

श्रीबालधन्वी गुरु (इलयविल्ली) श्रीरामानुज स्वामीजी के मौसेरे भाई (श्रीगोविंदाचार्य स्वामीजी के जैसे) थे। उन्हें श्रीबालधन्वी गुरु के नाम से बुलाते थे। इलयविल्ली / बालधन्वी का अर्थ श्री लक्ष्मणजी हैं - उन्होंने श्रीरामानुज स्वामीजी कि सेवा कि उसी तरह जैसे श्री लक्ष्मणजी ने श्रीरामजी कि सेवा की। वह श्रीरामानुज स्वामीजी द्वारा स्थापित ७४ सिंहासनाधिपति में एक हैं। आपकी तनियन और वाझि तिरुनामं से यह सिखा जाता हैं कि आप श्री शैलपूर्ण स्वामीजी से जुड़े हुए थे और आपने उनकी बहुत सेवा भी कि थी। चरमोपाय निर्णय में श्री नायनाराच्चान् पिल्लै ने श्रीबालधन्वी गुरु (श्री इलयविल्ली) के महिमा को दर्शाया हैं। इसे हम अब देखेंगे।

जब श्रीरामानुज स्वामीजी परमपद के लिये प्रस्थान किया उनके अनेक शिष्यों ने उनके वियोग में अपने प्राण त्याग दिये। श्रीकनीयनूर सीरियाचन रामानुज स्वामीजी के शिष्य थे, कुछ समय के लिये कैंकर्य हेतु अपने गाँव कनीयनूर में विराजमान थे। कुछ दिनों बाद श्रीरंगम की ओर श्रीरामानुज स्वामीजी के पास उनकी सेवा के लिये जा रहे थे। जाते समय रास्ते में किसी श्रीवैष्णव से उन्होंने अपने आचार्य श्रीरामानुज स्वामीजी के स्वास्थ के बारें में पूछा। तब श्रीवैष्णव ने श्रीरामानुज स्वामीजी के परमपद गमन का समाचार सुनाया। यह सुनते ही उसी क्षण श्रीकनीयनूर सीरियाचन ने ''येम्पुरुमानार तिरुवडिगले शरणम'' (श्रीरामानुज स्वामीजी के चरणारविंदों कि शरण ग्रहण करता हूँ) कहकर परमपद के लिये प्रस्थान किया।

श्री इलयविल्ली तिरुप्पेरूर में विराजमान थे। एक दिन उनके स्वप्न में आया कि श्रीरामानुज स्वामीजी दिव्य विमान में विराजमान होकर आकाश की ओर बढ़ रहे थे। परमपदनाथ भगवान हजारों नित्यसूरीगण, श्रीशठकोप स्वामीजी, श्रीनाथमुनी स्वामीजी और अनेक आचार्यगण वाद्य गान करते हुये श्रीरामानुज स्वामीजी का परमपद में स्वागत कर रहे हैं। वह यह देख रहे थे श्रीरामानुज स्वामीजी का विमान परमपद कि ओर प्रस्थान कर रहा हैं और सब उनके पीछे जा रहे हैं। निद्रा से उठकर और जब उन्हें यह पता चला क्या हुआ हैं। वह अपने पड़ोसी को बताते हैं ''वल्लाल मणिवण्णं'' कि ''हमारे आचार्य श्रीरामानुज स्वामीजी दिव्य विमान में विराजमान होकर परमपद कि ओर प्रस्थान कर रहे हैं और उनके साथ परमपदनाथ और नित्यसूरी भी हैं।'' मैं उनकी अनुपस्थिति में यहाँ पर नहीं रह सकता। ''येम्पुरुमानार तिरुवडिगले शरणम'' कहकर परमपद के लिये प्रस्थान किया। ऐसे अनेक शिष्य थे जो श्रीरामानुज स्वामीजी का वियोग सहन नहीं कर सके और अपना शरीर त्याग दिया। जो शिष्य श्रीरामानुज स्वामीजी के अंतिम समय में उनके साथ में थे उनको स्वामीजी ने आज्ञा किया कि मेरे वियोग में शरीर त्यागना नहीं, आगे तुम लोगों को हीं सम्प्रदाय का प्रचार प्रसार करना हैं। स्वामीजी की आज्ञा का पालन करते हुये अनेक शिष्यजन कैंकर्य में लग गये। यहाँ आचार्य के वियोग में शिष्यजन अपना शरीर त्यागते हैं, यह श्रीरामानुज स्वामीजी के वैभव को प्रकाशित करता हैं।

हमने यहाँ पर श्रीबालधन्वी गुरु (इलयविल्ली) के जीवन के कुछ सुंदर बातें देखी। वह पूरी तरह भागवत निष्ठा वाले थे और स्वयं श्रीरामानुज स्वामीजी को प्रिय थे। हम उनके चरणारविंद में यह प्रार्थना करते हैं कि हम में भी कुछ भागवत निष्ठा आ जाये।

श्रीबालधन्वी गुरु (इलयविल्ली) कि तनियन

श्री कौसिकान्वया महाभूथि पूर्णचंध्रम
श्री भाष्यकार जननी सहजा तनुजम
श्री शैलपूर्ण पद पंकज सक्त चित्तम
श्री बालधन्वी गुरुवर्यम अहं भजामी

(स्तोत्र : चरमोपाय निर्णय, कस्तुरी रंगन स्वामी कि तमिल में संग्रह (तनियन और चित्रपट के लिये))।

श्री किडाम्बि आच्चान्

- श्री अनुज कुमार अगर्वाल

मोबाइल - ९१७८१७६६६६

तिरुनक्षत्र : चित्रा, हस्ता

अवतार स्थल : कांचीपुरम

आचार्य : श्रीरामानुजस्वामीजी

बचपन में आपका नाम ''प्रणतार्तिहरर्'' था। (देवराज अष्टकम में श्रीकांचीपूर्ण स्वामीजी ने श्रीवरदराज भगवान को बड़े सम्मान और प्यार से प्रणतार्तिहरर् कहके पुकारा।)

उनको श्रीरामानुजस्वामीजी के मुख्य रसोइया बनाया गया था। इस फैसले का निर्णय श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी ने किया था। इस फैसले के पीछे एक दिलचस्प कहानी ''६००० पड़ी गुरु परंपरा प्रभावम'' और कुछ और पूर्वाचार्य ग्रंथों में लिखा गया है।

श्रीरामानुजस्वामीजी गद्यत्रय का अध्ययन किये और नित्य ग्रंथ (तिरुवाराधन क्रम) भी लिखे। इस तरह वे इस श्रीवैष्णव सम्प्रदाय का पालन और पोषण किया। श्रीरामानुजस्वामीजी के समय में भी आज की तरह कुछ एसे लोग थे जो खुद लाभकारी काम नहीं करते और दूसरों को करने भी नहीं देते। ऐसे कुछ लोग श्रीरंगम में थे जो श्रीरामानुज स्वामीजी के विचारों से सहमत नहीं थे। वे व्याकुल पड़े और ऐसी एक अकल्पनीय और दुष्ट कार्य किया जिससे श्रीरामानुजस्वामीजी की जान खतरे में पड़ी।

उन्होंने खाने में जहर मिलाकर उसे भिक्षा के रूप में श्रीरामानुजस्वामीजी को देने की योजना बनाई। श्रीरामानुजस्वामीजी हर एक घर में, हमेशा की तरह, उस दिन भी भिक्षा मांगते आये और उस घर के सामने आ खड़े जिस घर की महिला के हाथ में वो दूषित आहार था। श्रीरामानुजस्वामीजी उस आहार को स्वीकार कर निकल ही पड़े की उस औरत के आखों में आँसू आ गये। वो श्रीरामानुजस्वामीजी को सूक्ष्म रूप से यह संदेश देना चाहती थी कि वे उस दुष्ट आहार को न छूए। वो अपने पति की इस साजिश का हिस्सा बनना नहीं चाहती थी। वो अपनी भिक्षा को स्वामी के अन्य भिक्षा से अलग किया और अपने चेहरे में अत्यंत दुःख की भावना दिखाई। श्रीरामानुजस्वामीजी को दण्डवत प्रणाम

करने के बाद भारी मन से घर वापस लौटी। श्रीरामानुजस्वामीजी को समझ में आ गया की उस भिक्षा में कुछ गलत है। वे उसे कावेरी नदी में बहा दिया और उस दिन से कठिन व्रत का पालन करने लगे।

श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी इस घटना के बारे में सुनते ही तुरंत श्रीरंगम आ पहुँचे। श्रीरामानुजस्वामीजी अपने आचार्य का स्वागत करने गर्म धूप में कावेरी नदी के किनारे शिष्य सहित पधारे।

अपना आचार्य को देखते ही श्रीरामानुजस्वामीजी ने दंडवत प्रणाम करते हुए उस अत्यधिक गर्म रेत पर अपने आचार्य की आज्ञा की इंतजार करते लेटे थे। (हमारी संप्रदाय का एक और विशेष क्रम है कि एक शिष्य, अपने आचार्य को दंडवत प्रणाम करते समय, तभी उठे जब आचार्य कहे)। श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी ने कुछ समय की देरी की, यह जानने के लिए कि कौन श्रीरामानुजस्वामीजी की इस दिव्यमंगलरूप की ओर तरसता है और इसी से स्वामी की शुभचिंतक की जानकारी भी हो जाएगी।

किडाम्बि आच्चान् तड़प उठे और श्रीरामानुजस्वामीजी को तुरंत उठाया और श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी से पूछा ''यह कैसा अजीव नियम है? श्रीरामानुजस्वामीजी को इस गर्म धूप में इतनी देर लेटे रहने दिया आपने? इस कोमल फूल की यह क्या कठोर परीक्षा कर रहे हैं आप?'' किडाम्बि आच्चान् की इस फिकर और विनम्रता से प्रसन्न होकर नम्बि विज्ञापन किये ''तुम ही हो जो श्रीरामानुजस्वामीजी से अत्यधिक प्रेम करते हो। तुम ही उसके शुभचिंतक हो। आज से तुम्हे रामानुजजी की भिक्षा की जिम्मेदारी सौंपा जाए!!'' किडाम्बि आच्चान् स्वयं को सौभाग्यशाली मानकर उसी दिन से अपने कर्तव्य का पालन किया।

हमारे व्याख्यानों में ऐसे कुछ कथाएँ हैं जो स्वामी किडाम्बि आच्चान् के यश और महिमा के बारे में प्रकाश डालते हैं। उनमें से कुछ उदाहरण नीचे देखेंगे :

१) तिरुप्पावै २३:- पेरियावाच्चान पिल्लै व्याख्यान- इस पाशुर के द्वारा आंडाल गोपियों और श्रीकृष्ण परमात्मा के मध्य हुयी सम्भाषण के बारे में बताती हैं। गोपिकास्त्री श्रीकृष्ण से कहती हैं कि ''उनका कोई आक्षय नहीं है। यह साबित करने के लिए कि उनको श्रीकृष्ण के चरण कमल ही एकमात्र चरण शरण है, एक घटना सुनाया गया। एक बार स्वामी किडाम्बि आच्चान् तिरुमालिरुंचोलाई में भगवान अयगर के दर्शन करने निकल पड़े। भगवान अयगर उनको आदेश दिया कि वे कुछ पाठ सुनाये। स्वामी किडाम्बि आच्चान् ''अपराध सहस्त्रा भाजनम्... अगतिम...'' सुनान प्रारम्भ किये। तब भगवान अयगर, नम्बि से कहा की ''जब

श्रीरामानुजस्वामीजी के चरणों में आत्मसमर्पण किया है तो स्वयं को अगतिम कैसे पुकार सकते हो?''

२) तिरुविरुत्तम ९९ - श्रीपेरियवाच्चान पिल्लै व्याख्यान - इसमें एक कहानी के जरिये, श्रीकुरेश स्वामीजी की महिमा प्रकाशित की जाती है। एक बार किडाम्बि आच्चान् श्रीकुरेश स्वामीजी की उपन्यास सुनकर देर से लौटे। श्रीरामानुजस्वामीजी ने पूछा तो बताया कि श्रीकुरेश स्वामीजी की कथा सुनते देर हो गई। श्रीरामानुजस्वामीजी फिर प्रश्न किये कि कालक्षेप किस पाशुर का था। आच्चान् ने उत्तर दिया कि ''पिरंदवारुं वलरंतवारुं व्याख्याखंड'' पर कालक्षेप हो रहा था। श्रीरामानुजस्वामीजी विवरण से पूछे तो आच्चान् ने कहा ''श्रीकुरेश स्वामीजी पहले उस अनुच्छेद को पड़े, उस अनुच्छेद के तात्पर्य का विश्लेषण करने लगे और जैसे ही करते रहे उनका दिल पिघलने लगा और श्रीकुरेश स्वामीजी शोक में डूब गए। श्रीकुरेश स्वामीजी कहने लगे कि श्रीशठकोप स्वामीजी बड़े ही अनोखे थे, उनका अनुभव भी कितना अनोखा, अद्भुत और दिव्य था। भगवान से बिछडके, वे जो विरह में जल रहे थे, उसे ना कोई समझ सकता है और ना ही कोई वर्णन कर सकता है। यह कहकर श्रीकुरेश स्वामीजी कालक्षेप की अंत कर दी। इसे सुनकर श्रीरामानुजस्वामीजी अत्यंत खुश हुए और श्रीकुरेशस्वामीजी की शुद्ध हृदय और उनकी भक्ति की प्रशंसा किये।

३) श्रीसहस्त्रगीति पर श्रीकलिवैरिदास स्वामीजी कि ईडु व्याख्यान - श्रीशठकोप स्वामीजी निरन्तर भगवान की सोच में निरत रहते हैं। कैंकर्य प्राप्ति होते ही भगवान की कारुण्यता से अभिभूत हो जाते हैं। श्रीशठकोप स्वामीजी के दिव्य भावनाओं को स्थापित करते हुए एक कहानी है जिसे हम अब देखेंगे। एक बार तदियारादन के समय किडाम्बि आच्चान् सभी श्रीवैष्णवों को जल पिलाने का कैंकर्य कर रहे थे। (उन दिनों, हर एक श्रीवैष्णव के मुंह में सीधा पानी पिलाते थे, आज की तरह हर एक को अलग अलग गिलास दिया नहीं जाता था) गोष्टी में से एक श्रीवैष्णव जब जल मांगते, तो उस श्रीवैष्णव को बाजु से जल पिला रहे थे।

इसे देख श्रीरामानुजस्वामीजी ने आच्चान् को समझाया कि सामने से जल पिलाते हैं, बगल से नहीं ताकि उस श्रीवैष्णव महान को तकलीफ ना पहुँचे। श्रीरामानुजस्वामीजी के काल में भागवत कैंकर्य को इतनी महत्व दी जाती थी। इसे सुनकर आच्चान् अति आनंदित हुए और श्रीरामानुजस्वामीजी को धन्यवाद दिया और श्रीशठकोप स्वामीजी के शब्दों से उनकी प्रशंसा ऐसे करने लगे- मैं उन श्रीशठकोप स्वामीजी से कृतज्ञ हूँ जो मेरे जैसे अनुपयुक्त को भी भागवत कैंकर्य में उपयोग किये!।

४) श्रीसहस्त्रगीति पर श्रीकलिवैरिदास स्वामीजी कि ईडु व्याख्यान - श्रीशठकोप स्वामीजी निरंतर दिव्यदेशों कि सौंदर्यता की प्रशंसा करते रहते थे। उनका मानना था की मनुष्य को नेत्र भगवान के इस सुंदर दिव्यदेश को देख और इनकी सुंदरता पर मोहित होने के लिए दिये हैं। किडाम्बि आच्चान् और दाशरथि स्वामीजी एक बार अप्पकुडथ्थान मंदिर की सुंदरता में डूब गए थे।

इस प्रकार स्वामी किडाम्बि आच्चान् के जीवन की झलक हमें मिली। वे पूरी तरह से भागवत कैंकर्य और निष्ठा में तल्लीन थे और श्रीरामानुजस्वामीजी के प्रिय शिष्यों में से एक थे।

किडाम्बि आच्चान् तनियन

रामानुज पदाम्भोजयुगली यस्य धीमतः।
प्राप्यम् च प्रापकम् वंदे प्रनथार्थीहरम गुरुम्।।

श्री मधुरकवि स्वामीजी

श्रीमती सरोज. भट्टड
मोबाइल - ९११३५८७४६९

तिरुनक्षत्र : चैत्र मास, चित्रा नक्षत्र

अवतार स्थल : तिरुक्कोळूर्

आचार्य : श्रीशठकोप स्वामीजी

परमपद प्रस्थान स्थल : आळ्वार तिरुनगरि

ग्रंथ रचना सूची : कण्णिनुण् शिरूताम्बु

श्रीकलिवैरीदास स्वामीजी ने व्याख्यान अवतरिका में मधुरकवि आळ्वार की वैभवता के बारे में अति सुन्दरता से वर्णन किया है।

ऋषियों का ध्यान सामान्य शास्त्र पर होता है जो ऐश्वर्य, कैवल्य और भगवत कैंकर्य को पुरुषार्थ (आत्म का लक्ष्य) मानते है। आळ्वारों का ध्यान उत्तम पुरुषार्थ (परम लक्ष्य) पर होता है, अर्थात् श्रीमन्नारायण भगवान की प्रेम पूर्ण सेवा कैंकर्य। मधुरकवि आळ्वार का ध्यान अति उत्तम (परमोत्तम) पुरुषार्थ- भागवत कैंकर्य पर है। भागवत कैंकर्य- भगवत भक्तों की सेवा करना है, जो निश्चित रूप से एम्पेरुमान् को अत्यंत प्रिय हैं।

यह विषय हम श्रीरामायण में भी देख सकते है। और इसी कारण वह वेद के मुख्य विषयों का अति सुलभता से विवरण करता है।

१) श्रीराम भगवान स्वयं धर्म के साक्षात स्वरूप है - इसलिए उन्होंने "पितृ वचन पालन" (बुजुर्ग लोगों के आदेश मानना इत्यादि) जैसे सामान्य धर्म की स्थापना की।

२) इळया पेरुमाळ (श्रीलक्ष्मणजी) ने विशेष धर्म - शेषत्वम् की स्थापना की जिसके अनुसार शेष (दास) को हमेशा अपने शेषि (मालिक) का अनुगमन करना चाहिए और उनकी सेवा करना चाहिए। उन्होंने श्रीराम से कहा की "अहम् सर्वं करिष्यामि" (आपके लिए मैं सब कुछ करूँगा) और उस विषय का आचरण भी किया है।

३) श्री भरताल्वान् (भरत) ने पारतन्त्रियम् की स्थापना की है, जो जीवात्मा का स्वाभाविक स्वरूप है। बिना कुछ स्वपेक्षा किये अपने मालिक की इच्छा अनुसार आज्ञा का पालन करना

पारतन्त्रियम् कहा जाता है। पेरुमाळ की इच्छा थी की भरताल्वान् अयोध्या में रहे और राज्य का परिपालन करे, भरताल्वान् उनकी आज्ञा पालन करते है और उसे परम आदेश मानकर अयोध्या के बाहर १४ साल श्रीराम के समान वस्त्र धारण कर और अनुष्ठान से बिताते है।

४) श्री शत्रुघ्नाळवान (शत्रुघ्न) अपने स्वरूप का प्रतीक भागवत् शेषत्वम् की स्थापना करते हैं। अन्य विषयों के प्रति मोह त्याग केवल भरताल्वान् का अनुगमन करते हुए उनकी सेवा में जुट गए।

श्रीकलिवैरीदास स्वामीजी यहाँ श्री भाष्यकार (रामानुजर) द्वारा बताये गए कथन का उल्लेख करते है कि श्री शत्रुघ्नाळवान, भरताळवान् के प्रति पूर्ण आत्म-समर्पण के कारण, अपने अन्य भाईयों - इळया पेरुमाळ और भरताल्वान् की अपेक्षा, श्रीराम के अत्यंत प्रिय थे। मधुरकवि आळवार, श्री शत्रुघ्न आळवान के समान थे, जो भागवत् निष्ठा में पूरी तरह से डूबे हुए थे। मधुरकवि आळवार, श्रीशठकोप स्वामीजी के श्रीचरणों की शरण में थे और पूर्णतः उनकी सेवा में थे। उनके लिए नम्माळवार ही लक्ष्य (उपेय) है और वे ही लक्ष्य साधन के प्रक्रिया (उपाय) भी है। मधुरकवि आळवार ने अपने दिव्यप्रबन्ध में इसी विषय को सूचित किया है।

पिळ्ळै लोकाचार्य स्वामीजी अपनी प्रसिद्ध रचना, श्रीवचन भूषण के अन्तिम प्रकरण में आचार्य अभिमान निष्ठा (पूरी तरह से आचार्य पर निर्भर/आश्रित रहना) की महत्ता को मधुरकवि आळवार के जीवन और नम्माळवार के प्रति उनके स्नेह और प्रेम का उदाहरण देते हुए समझाते है। ८वें प्रकरण में, भगवान की निर्हेतुक कृपा (अकारण ही कृपा करते है) का विवरण किया गया है। इसी के साथ, जीवात्मा को कर्मानुसार प्रतिफल देना भी उन्हीं पर निर्भर है। इस कारण हमें भगवान द्वारा हमारी स्वीकृति पर शंका हो सकती है। ९वें (अंतिम) प्रकरण में पिळ्ळै लोकाचार्य, चरम उपाय (अंतिम उपाय-आचार्य पर निर्भर-आश्रित रहना) की महानता को स्थापित करते है और यह बताते है कि किस प्रकार से यह उपाय जीवात्मा को सुगमता से मुक्त कर देता है। आईये इसके बारे में देखे।

४०७ सूत्र में वे बताते है कि हमें यह भ्रम हो सकता है कि क्योंकि भगवान स्वतन्त्र है, और इस हेतु वे हमें अपने कारुण्य (कृपा) द्वारा स्वीकार भी कर सकते है और शास्त्रों के विषयानुसार (जिसमें कर्मानुसार फल प्राप्ति होती है) अस्वीकार भी कर सकते है। श्रीवरवरमुनि स्वामीजी अपने व्याख्यान में बताते हैं की इस सूत्र की पूर्ती के लिए निम्न विषय का योग आवश्यक है- ''जब हम आचार्य, जो परतन्त्र है (भगवान पर पूर्णरूप से निर्भर है) के श्रीचरणों में आश्रित होते हैं, तब कोई शंका नहीं रहती, क्योंकि वे यह सुनिश्चित करते है कि हम अपने लक्ष्य को अवश्य (परमपद) प्राप्त करें, क्योंकि आचार्य कारुण्य रूप है और केवल जीवात्मा की उन्नति के बारे में ही देखते हैं।''

४०८ सूत्र में बताते है की यह विषय, अन्य १० आळवारों (मधुरकवि आल्वार और आण्डाल के अतिरिक्त), जो पूर्णतः भगवान के आश्रित है, की पाशुरों के माध्यम से स्थापित नहीं हो सकता है। एम्पेरुमान् के दिव्य अनुग्रह से यह आळवार दोष रहित ज्ञान से प्रसादित थे। जब वे भगवत अनुभव में डुबे हुए होते है, तब वे भागवतों का गुणगान करते है। परंतु एम्पेरुमान् के वियोग में, असहनीय परिस्थिति के कारण व्याकुल होकर, वे भागवतों से उदास हो जाते है

(श्रीवरवरमुनि स्वामीजी अपने व्याख्यान में कई जगह इस विषय का उदाहरण देते हैं)। अन्त में श्रीवरवरमुनि स्वामीजी संक्षिप्त में कहते है कि अन्य १० आळवारों के पाशुरों के द्वारा आचार्य वैभव के महत्व का निरूपण करना संभव नहीं है परंतु मधुरकवि आल्वार के पाशुरों के द्वारा हम आचार्य वैभव निर्धारित कर सकते हैं।

४०९ सूत्र, यह प्रतिपादित करता है कि मधुरकवि आळवार अन्य आळवारों से महत्तर है क्योंकि अन्य आळवार कुछ समय भागवतों की वैभवता का गुणगान करते है और कुछ समय उनकी उपेक्षा करते हैं लेकिन मधुरकवि आळवार का ध्यान केवल आचार्य (नम्माळवार) वैभव पर केंद्रित था। केवल इन्हीं के शब्दों से हम आचार्य वैभव को स्थापित कर सकते है।

श्रीवरवरमुनि स्वामीजी, मधुरकवि आळवार की वैभवता को अपने उपदेश रत्न माला के २५वें और २६वें पाशुर में समझाते है।

२५वें पाशुर में वे कहते है कि मधुरकवि आळवार का अति पावन अवतार दिवस - चैत्र मास, चित्रा नक्षत्र, अन्य आळवारों के अपेक्षा, प्रपन्न जनों के स्वरूप के लिए सबसे उपयुक्त है।

२६वें पाशुर में वे आळवार और उनके प्रबन्ध का अत्यन्त वैभव युक्त वर्णन करते है-

वायत्त तिरुमंतिरत्तिं मत्तिममाम् पदम् पोल्।

सीर्त्त मधुरकवि शेय कलैयै।।

आर्त्त पुघळ आरियरगळ ताङ्गळ अरुळिचेयल नडुवे।

सेरवित्तार् तार्परियम् तेर्न्दु।।

पिळ्ळै लोकम् जीयर इस पाशुर का सुन्दर विवरण देते है। कण्णिनुण् शिरूताम्बु के लिए तिरुमन्त्र के नमः पद का उदाहरण देते है। तिरुमन्त्र की प्रसिद्धि यह है कि वह वाचक को संसारिक बंधनों से मुक्त कर देता है। तिरुमन्त्र में नमः पद एक मुख्य पद है - जो स्पष्ट रूप से यह स्थापित करता है कि स्वयं का संरक्षण करने में हमारी कोई भूमिका नहीं है और अपने संरक्षण के लिए हमें अपने नाथ भगवान पर पूरी तरह से निर्भर होना चाहिए। इसी सिद्धांत का वर्णन मधुरकवि आळवार (जो स्वयं अपने आचार्य निष्ठा के लिए महान है) ने अपने दिव्यप्रबंध में किया है। वे बताते है कि हमें स्वयं के संरक्षण के लिए संपूर्णतः आचार्य पर निर्भर रहना चाहिए। शास्त्र के सार को वास्तविकता में दर्शाने के कारण ही, हमारे पूर्वाचार्यो ने इस प्रबंध को ४००० पाशुरों के दिव्यप्रबंध में जोड़ा है। जिस प्रकार मधुरकवि आळवार का तिरुनक्षत्र - चित्रा नक्षत्र, २७ नक्षत्रों के मध्य में हैं, उसी प्रकार उनके प्रबंध को भी दिव्यप्रबंध रत्न माला का केंद्र माना जाता है।

इस प्रकार हम देख सकते है कि श्रीरामानुज स्वामीजी, श्रीकलिवैरीदास स्वामीजी, पिळ्ळै लोकाचार्य स्वामीजी और श्रीवरवरमुनि स्वामीजी ने इस समान विषय का वर्णन पृथक दृष्टिकोणों से किया है।

इस विषय के साथ, आईये उनके चरित्र को देखे- मधुरकवि आळवार ने चैत्र मास - चित्रा नक्षत्र में तिरुकोळूर् में अवतार लिया। जैसे सूरज के पहले सूरज की किरणे/रौशनी आती है, उसी तरह श्रीशठकोप स्वामीजी के दिव्य अवतार के पूर्व इन्होंने अवतार लिया है। इनकी महानता देखते हुए, गरुड़ वाहन पण्डित अपने दिव्य सूरी चरित्र में इन्हे ''कुमुद गणेश'' या ''गरुडाळवार'' के अंश मानते हुए गौरवान्वित करते है (वास्तव में आळवारों को एम्पेरुमान् ने सँसार से चुनकर उन्हें दिव्य आशीर्वाद प्रदान किया)

क्रमशः

श्री अनंताल्वान स्वामीजी

श्रीमती ललिता सम्पत. रांदड
मोबाइल - ९९१६६७७९८९

तिरुनक्षत्र : चित्रा नक्षत्र, चैत्र मास

अवतार स्थल : सिरुपुत्तुर / किरङ्गनूर (बेंगलूरु - मैसूर मार्ग में)

आचार्य : श्रीदेवराज मुनि स्वामीजी

परमपद प्रस्थान प्रदेश : तिरुमल (तिरुपति)

रचनाएँ : वेंकटेश इतिहास माला, गोदा चतुश्लोकि, रामानुज चतुश्लोकि

श्रीरामानुजस्वामीजी की कीर्ति और वैभव के बारे में सुनकर अनन्ताल्वान जो अनन्ताचार्य, अनन्त सूरि आदि नामों से प्रख्यात हैं उनके पास गए। वे श्रीरामानुजस्वामीजी के चरण कमलों में आश्रय लेने की अपनी इच्छा को प्रकट किये। श्रीरामानुजस्वामीजी, अनन्ताल्वान को श्रीदेवराज मुनि स्वामीजी के शिष्य बनने का निर्देश दिये। वे सभी प्रसन्नता से उसे स्वीकार करते हैं और अत्यन्त आनन्द से उनके निर्देश का अनुसरण करते हैं। श्रीदेवराज मुनि स्वामीजी उनसे कहते हैं कि वे उनके शिष्य होने पर भी केवल श्रीरामानुजस्वामीजी के दिव्य चरणारविंदों के ही आश्रय करें। तिरुमल में श्रीरामानुजस्वामीजी के दिव्य चरण कमलों को अनन्ताल्वान कहा जाता है। अनन्ताल्वान निम्न विषयों में श्री मधुरकवि स्वामीजी के समान थे :

१) दोनों के तिरुनक्षत्र चित्रा, चैत्र मास था।

२) वे दोनों ही पूर्णतः आचार्य निष्ठा में निरत थे- श्री मधुरकवि स्वामीजी सदा श्री शठकोप स्वामीजी के दिव्य चरणों के ही ध्यान में रहते थे और श्री अनन्ताल्वान स्वामीजी निरंतर श्रीरामानुजस्वामीजी के चरण कमलों का ही चिन्तन किया करते थे।

तद्पश्चात श्रीसहस्रगीति के मधुर पाशुरों पर व्याख्यान देते हुए, श्रीरामानुजस्वामीजी समझाना प्रारंभ करते हैं जहां श्री शठकोप स्वामीजी श्री वेंकटेश भगवान के प्रति शुद्ध और सतत कैंकर्य करने की अपनी उत्कट अभिलाषा प्रकट करते हैं। उस पद में आल्वार, तिरुवेंकटमुदैयाँ की ताजे और प्रचुर मात्रा में पुष्पों की अभिलाषा को दर्शाते हैं। श्रीरामानुजस्वामीजी, आल्वार के इस दिव्य मनोरथ का चिंतन करते हुए, अपनी सभा के समक्ष एक प्रश्न रखते हैं ''क्या कोई है जो तिरुमल जाकर, एक सुंदर बगीचा बनाकर, प्रतिदिन भगवान की सुंदर पुष्पों से सेवा करेगा?'' श्री अनंताल्वान स्वामीजी तुरंत उठकर कहते हैं कि वे आल्वार और

श्रीरामानुजस्वामीजी की मनोरथ पूर्ण करेंगे। श्रीरामानुजस्वामीजी अति प्रसन्न होते हैं और अनंताल्वान तुरंत तिरुमल के लिए प्रस्थान करते हैं। प्रथम वे तिरुवेंकटमुदैयाँ (भगवान श्री वेंकटेश्वर) का मंगलाशासन

करते हैं, बगीचे का निर्माण करते हैं और उसका नाम ''इरामानुसन्'' रखकर प्रतिदिन ताजे पुष्पों से भगवान का कैंकर्य प्रारंभ करते हैं। यह सुनकर श्रीरामानुजस्वामीजी निर्णय करते हैं कि वे तिरुमल जाकर बगीचे

का दर्शन करेंगे। वे तीव्रता से अपने श्रीसहस्रगीति कालक्षेप (व्याख्यान) को पूर्ण करते हैं और तिरुमल की ओर प्रस्थान करते हैं।

वे कांचीपुरम मार्ग से होते हुए (श्रीवरदराज भगवान और श्री कांचीपूर्ण स्वामीजी का मंगलाशासन करते हुए) तिरुपति पहुँचते हैं। अनंताल्वान अन्य श्रीवैष्णवों के साथ तल पर आकर श्रीरामानुजस्वामीजी का स्वागत करते हैं। श्रीरामानुजस्वामीजी पहले तो तिरुमल पर्वत पर चढ़ाई करने से यह कहते हुए मना कर देते हैं कि तिरुवेंकट पर्वत स्वयं आदिशेष का अवतार रूप है। परंतु अपने शिष्यों के बारम्बार यह प्रार्थना किये जाने पर कि यदि श्रीरामानुजस्वामीजी चढ़ाई नहीं करेंगे तो वे भी चढ़ाई कैसे कर सकते हैं, श्रीरामानुजस्वामीजी सहमती देते हैं और अत्यंत श्रद्धा के साथ पर्वत पर चढ़ाई करते हैं। श्री शैलपूर्ण स्वामीजी स्वयं तिरुमल के प्रवेश द्वार पर आते हैं और श्रीरामानुजस्वामीजी का स्वागत करते हैं। फिर श्रीरामानुजस्वामीजी ''इरामानुसन्'' बगीचे में जाते हैं और वहाँ पुष्पों के विविध प्रकारों को देखकर अति प्रसन्न होते हैं। श्री परकाल स्वामीजी द्वारा कहा गया है ''वलर्थतदनाल पयन पेट्रेन्'' (परकाल नायकी उद्घोषणा करती

है कि वे अपने प्रिय तोते की देखभाल करके बहुत प्रसन्न है क्योंकि तोता हर क्षण भगवान के नाम / चरित्र को दोहराता है), श्रीरामानुजस्वामीजी भी अनंताल्वान की अत्यंत निष्ठा से बहुत प्रसन्न थे।

एक बार जब अनंताल्वान और उनकी गर्भवती पत्नी, बगीचे में एक तालाब बनाने के लिए कार्य कर रहे थे, भगवान स्वयं एक छोटे बालक के रूप में प्रकट होकर उनकी सहायता करने की प्रयास करते हैं। क्योंकि अनंताल्वान अपने आचार्य के आदेश को स्वयं पूरा करना चाहते थे और इसलिए वे उस बालक की सहायता लेने से मना कर देते हैं। परंतु अनंताल्वान की पत्नी उनकी अनुपस्थिति में उस बालक की सहायता स्वीकार कर लेती है। उसे जानकार, अनंताल्वान बहुत क्रोधित होते हैं और वे उस बालक का पीछा करते हैं और अंतः अपनी सब्बल उस पर फेंकते हैं। वह सब्बल उस बालक के ठोड़ी पर लगती है परंतु वह बालक मंदिर में पहुँचकर अदृश्य हो जाता है। मंदिर में स्वयं तिरुवेंकटमुदैयाँ (भगवान वेंकटेश्वर) की ठोड़ी पर चोट के निशान दिखाई देता है और इसीलिए आज भी तिरुवेंकटमुदैयाँ की ठोड़ी पर घाव को शीतल करने के लिए पचई कर्पूरं (कपूर) लगाया जाता है।

एक बार अनंताल्वान को सांप ने काट लिया। जब उनके सहयोगी इस बात पर चिंतित होते हैं, वे सरलता से कहते हैं कि यदि सांप अधिक शक्तिशाली है, तो मैं यह शरीर त्यागकर, विरजा नदी में नहाकर परमपद में भगवान की सेवा करूँगा। और यदि मेरा शरीर अधिक शक्तिशाली है तो मैं यही तिरुवेंकटाचल में पुष्करिणी में नहाकर अपना कैंकर्य जारी रखूँगा। उन्हें कैंकर्य इतना प्रिय था कि वे अपने शरीर का किंचित मात्र भी ध्यान नहीं रखते थे।

एक बार अनंताल्वान तिरुवेंकटाचल से प्रसाद का एक झोला, यात्रा करते हुए समीप के गाँव में ले जाते हैं। जब वे उसे खोलते हैं, वे उसमें कुछ चीटियों को देखते हैं, वे तुरंत अपने शिष्यों को निर्देश देते हैं कि उन चीटियों को पर्वत पर पुनः छोड आये। वे कहते हैं ''क्योंकि श्री कुलशेखर स्वामीजी ने उद्घोषणा की है कि वे (और भगवान के अन्य भक्तगण) तिरुमल में निवास करने के लिए कोई भी रूप धारण कर सकते हैं, यह (चींटी) वही हो सकते हैं इसलिए हमें तिरुवेंकटाचल में इनके जीवन में बाधा नहीं डालनी चाहिए।''

एक बार जब अनंताल्वान एक माला बना रहे थे, तब भगवान वेंकटेश उन्हें अपनी सन्निधि में बुलाने के लिए किसी को भेजते हैं। अनंताल्वान अपने माला बनाने का कैंकर्य संपन्न करने के पश्चाद वहाँ विलंब से पहुँचते हैं। भगवान पूछते हैं ''आपको विलंब कैसे हो गया?''

तब श्री अनंताल्वान कहते हैं ''जबकि पुष्प खिल रहे थे, मैं माला पिरोना चाहता था, श्रीरामानुजस्वामीजी के दिए आदेश के फलस्वरूप अपने कैंकर्य के अतिरिक्त इस सन्निधि में करने के लिए मेरे पास कुछ नहीं है।'' भगवान पूछते हैं, ''यदि मैं आपको इस स्थान से जाने के लिए कहूँ, तब?'' इस पर अनंताल्वान कहते हैं ''आप मुझसे थोडे ही पहले तिरुमल में पधारे और मैं तो अपने आचार्य के आदेश पर यहाँ आया हूँ। आप मुझे जाने के लिए कैसे कह सकते है?।'' भगवान अनंताल्वान की महान आचार्य निष्ठा देखकर बहुत प्रसन्न होते हैं।

अनंताल्वान के निर्देश और महिमा को व्याख्यान में अनेक स्थानों पर दर्शाया गया है। अब हम उनमें से कुछ यहाँ देखते हैं।

१) पेरियाल्वार तिरुमोळि - श्री वरवरमुनि स्वामीजी व्याख्यान - इस पाशुर में आल्वार तिरुक्कोष्टियूर के श्रीवैष्णवों की बढाई करते हुए कहते हैं कि वे अपने आचार्य के प्रिय वचनों के अतिरिक्त और कोई वचन नहीं कहेंगे। इस संबंध में मामुनिगल, अनंताल्वान की श्री पराशर भट्टर स्वामीजी के प्रति प्रीति को दर्शाते हैं। अपने अंतिम दिनों में, श्री अनंताल्वान स्वामीजी किसी श्रीवैष्णव से पूछते हैं कि श्री पराशर भट्टर को कौन सा नाम अति प्रिय है। वे कहते हैं कि भट्टर को श्रीरंगनाथ भगवान के ''अलगिय मणवालन'' नाम के प्रति अत्यंत प्रीति है। अनंताल्वान फिर कहते हैं ''हालांकि पति का नाम उच्चारण करना उचित शिष्टाचार नहीं है, परंतु क्योंकि भट्टर को यह नाम प्रिय है तब मैं वही कहूँगा'' और ''अलगिय मणवालन'' कहते हुए वे परमपद की ओर प्रस्थान करते हैं। हालांकि अनंताल्वान परमपद जाने से पहले श्री रामानुजस्वामीजी का नाम कहना चाहते थे, परंतु जब उन्हें श्री पराशर भट्टर स्वामीजी की ''अलगिय मणवालन'' के प्रति प्रीति के बारे में सुना, उन्होंने वही नाम लिया।

२) पेरुमाल तिरुमोळि ४.१० - श्री पेरियावाच्चान पिल्लै व्याख्यान- इस पद में, श्री कुलशेखर स्वामीजी तिरुवेंकटेश्वर के प्रति अपना महान लगाव प्रदर्शित करते हैं। वे कहते हैं कि वे तिरुमल दिव्य पर्वत पर किसी भी रूप में निवास करना चाहते हैं। श्री अनंताल्वान स्वामीजी समझाते हैं कि तिरुमल दिव्य पर्वत से संबंध प्राप्त करने के लिए उन्हें स्वयं श्री वेंकटेश भगवान भी होना पड़े तो उन्हें आपत्ति नहीं।

३) श्रीसहस्रगीति ६.७.१ - श्रीकलिवैरिदास स्वामीजी ईडु व्याख्यान - इस पद में, श्री शठकोप स्वामीजी, वैतमानिधि भगवान और तिरुक्कोलुर दिव्यदेश के प्रति अपनी महान प्रीति दर्शाते हैं। श्री कलिवैरिदास स्वामीजी एक घटना बताते हैं जहाँ श्री अनंताल्वान स्वामीजी अपने दिव्यदेश में रहकर वहीं पर भगवान की सेवा करने के महत्व को समझाते हैं। एक बार श्री अनंताल्वान स्वामीजी एक श्रीवैष्णव से भेंट करते हैं जो चोला कुलान्तकन नामक एक गाँव में रहते थे और कृषि करते थे। वे उनसे पूछते हैं कि वे कहाँ से हैं, तो वह श्रीवैष्णव बताते कि वे तिरुक्कोलूर से आये हैं। श्री अनंताल्वान स्वामीजी फिर उनसे पूछते हैं कि आपने अपना पैतृक स्थान क्यों छोडा? वह श्रीवैष्णव कहते हैं कि वे वहाँ कोई भी श्रम प्राप्त करने में असमर्थ थे इसलिए उन्होंने वह स्थान छोड दिया। उसके लिए श्री अनंताल्वान स्वामीजी कहते हैं, इस गाँव में आकर कृषि करने के स्थान पर आप तिरुक्कोलूर, जो भगवान और श्री शठकोप स्वामीजी दोनों को ही प्रिय है, वहाँ रहकर गायों को चरा कर धन अर्जित कर सकते थे और वहाँ रहते हुए उनकी सेवा भी कर सकते थे। वे दर्शाते हैं कि जीवात्मा के लिए इस संसार में, श्रीवैष्णवों के साथ दिव्यदेश में

रहते हुए कैंकर्य करना सबसे उत्तम है।

४)श्रीसहस्रागीति - श्री कलिवैरिदास स्वामीजी ईडु व्याख्यान के पाशुर में, श्री शठकोप स्वामीजी भगवान के लिए कहते है ''एन तिरुमगल सेर मारबन'' अर्थात् भगवान, श्रीमहालक्ष्मीजी को धारण करते हैं। आल्वार के इन दिव्य वचनों के प्रति अत्यंत प्रीति दर्शाते हुए अनंताल्वान ने अपनी पुत्री का नाम ''एन तिरुमगल'' रखा।

५) वार्तामाला - ३४५ - एक बार भट्टर अपने एक शिष्य को यह जानने के लिए कि एक श्रीवैष्णव को किस प्रकार व्यवहार करना चाहिए, अनंताल्वान के पास भेजते हैं। वे अनंताल्वान के निवास पर तदियाराधन के समय पहुँचते हैं। क्योंकि वह स्थान पूर्ण भरा हुआ था, वे सभी के प्रसाद पाने तक रुकते हैं। अनंताल्वान उन्हें देखते हैं और उन्हें अंत में अपने साथ प्रसाद पाने के लिए आमंत्रित करते हैं। अनंताल्वान उस श्रीवैष्णव से उनके बारे में पूछते हैं तब वह कहते हैं कि वे भट्टर के शिष्य हैं और भट्टर ने उन्हें यहाँ यह जानने के लिए भेजा है कि एक श्रीवैष्णव को कैसा होना चाहिए। अनंताल्वान कहते हैं ''एक श्रीवैष्णव को सारस, मुर्गी, नमक और आपके समान होना चाहिए।''

६) सारस सबसे उत्तम मछली की खोज करता है और सिर्फ उसे ही चुनता है। उसी प्रकार, श्रीवैष्णवों को हर समय भगवान की ओर समर्पित रहना चाहिए और भागवत कैंकर्य, जो सबसे उत्तम वरदान स्वरूप है, उसे स्वीकार करना चाहिए।

७) मुर्गी मिट्टी को अलग करके चावल के दानों को चुनती है। उसी प्रकार, श्रीवैष्णवों को शास्त्र (जिसमें विभिन्न लोगों के लिए विभिन्न वस्तुओं का वर्णन है) को खोजकर केवल बहुमूल्य सिद्धांतों जैसे परगत स्वीकार्य, भागवत कैंकर्य आदि को ही चुनना चाहिए और उनका अनुसरण करना चाहिए।

८) नमक खाद्य पदार्थ के साथ सूक्ष्मता से मिल जाता है और उसे स्वादिष्ट बनाता है। और नमक के अभाव को भी सुगमता से समझा जा सकता है। उसी प्रकार, श्रीवैष्णवों को अपना अहंकार त्यागकर अपनी उपस्थिति से अन्य श्रीवैष्णवों के जीवन में आनंद लाना चाहिए। और उन्हें इस प्रकार से व्यवहार करना चाहिए कि उनकी अनुपस्थिति में सभी उनके द्वारा किये गए अच्छे कार्यों को याद करे।

९) आज भी भगवान श्री वेंकटेश्वर द्वारा श्री अनंताल्वान स्वामीजी का सम्मान किया जाता है। उनके अवतार दिवस (चैत्र, चित्रा) और तीर्थदिवस / परमपदगमन दिवस (पूर्व फाल्गुनी) दोनों पर, तिरुवेंकटमुदैयाँ अनंताल्वान के बाग़ में जाते हैं और बकुल पेड़ को (जिसके नीचे अनंताल्वान के दिव्य शरीर का अंतिम संस्कार किया गया था) अपनी माला और श्री शठकोप को प्रदान करते हैं।

श्री अनंताल्वान स्वामीजी की तनियन

मेषे चित्रा समुद्भूतं यतिराज पदाश्रित।
श्रीवेंकटेश सद्भक्तं अनंतार्यमहं भजे।।

नडातुर अम्माल

श्री अजय कुमार. सरफ
मोबाइल - ९८४४००१४५०

तिरुनक्षत्र : चैत्र, चित्रा

अवतार स्थल : कांचीपुरम

आचार्य : एन्गालाल्वान्

शिष्य : श्रुतप्रकाशिका भट्टर (सुदर्शन सूरी), किदाम्बी अप्पिल्लार आदि

परमपद प्राप्त स्थान : कांचीपुरम

रचनायें : तत्त्व सारं, परत्ववादी पंचकं, गजेंद्र मोक्ष श्लोक द्वयं, परमार्थ श्लोक द्वयं, प्रपन्न पारिजात, चरमोपाय संग्रहम्, श्रीभाष्य उपन्यासं, प्रमेय माला, यतिराज विजय भाणं आदि।

कांचीपुरम में जन्म के बाद उनके माता-पिता ने उनका नाम वरदराजन रखा। वे नादतुर आल्वान के पौत्र हैं, जो स्वयं श्रीरामानुज स्वामीजी द्वारा नियुक्त किये गए श्रीभाष्य सिंहासनाधिपतियों में एक हैं।

वे प्रतिदिन कांचीपुर के श्री वरदराज भगवान की सेवा में गर्म दूध का भोग लगाते थे। जैसे एक माता ठीक तरह से जाँच कर अपने बालक के लिए दूध बनाती है, उसी प्रकार वे भी भगवान के लिए उत्तम गर्माहट युक्त, उचित ताप का दूध बनाया करते थे। इसीलिए स्वयं देव पेरुमाल ने सानुराग उन्हें अम्माल और वातस्य वरदाचार्य कहकर सम्मानित किया।

जब अम्माल अपने दादाजी से श्रीभाष्य सीखने की विनती करते हैं, तो वे अपनी वृद्धावस्था के कारण अम्माल से कहते हैं कि वे एंगलाल्वान के पास जाएँ और उनसे श्रीभाष्य सीखें। अम्माल, एंगलाल्वान के निवास पर जाकर दरवाजा खटखटाते हैं। जब एंगलाल्वान पूछते हैं ''कौन है?'' तब अम्माल उत्तर देते हैं ''मैं वरदराजन''। इस पर एंगलाल्वान कहते हैं ''मैं के मरने के बाद वापस आना''। अम्माल अपने निवास पर लौट आते हैं और अपने दादाजी को पूरा द्रष्टांत बताते हैं। नदातुर आल्वान उन्हें समझाते हैं कि हमें हमेशा पूर्ण विनम्रता से अपना परिचय ''अदियेन'' (दास) ऐसा कहकर देना चाहिए और मैं, मेरा आदि जो अहंकार सूचक शद्ब है उनका प्रयोग नहीं करना चाहिए। सिद्धांत को समझकर, अम्माल एंगलाल्वान के पास लौटते हैं और फिर दरवाजा खटखटाते हैं। इस समय जब इंगलाल्वान पूछते हैं कि दरवाजे पर कौन है, तब अम्माल कहते हैं ''अदियेन् वरदराजन।'' ऐसा सुनकर प्रसन्न, एंगलाल्वान, अम्माल का स्वागत करते हैं, उन्हें अपना शिष्य स्वीकार करके उन्हें संप्रदाय के मूल्यवान सिद्धांत सिखाते हैं। क्योंकि एंगलाल्वान नडातुर अम्माल जैसे महान विद्वान् के आचार्य हैं, उन्हें अम्माल के आचार्य के रूप में भी जाना जाता है।

अम्माल के प्रमुख शिष्य श्रुतप्रकाशिका भट्टर हैं (सुदर्शन सूरी - वेद व्यास भट्टर के पौत्र), जिन्होंने अम्माल से श्रीभाष्य सीखा और श्रीभाष्य पर महान व्याख्यान श्रुतप्रकाशिका और वेदार्थ संग्रह और शरणागति गद्यम पर भी व्याख्यान लिखा।

एक बार अम्माल दर्जनों श्रीवैष्णवों को श्रीभाष्य सिखा रहे थे। शिष्य कहते भक्ति योग का पालन करना बहुत कठिन है। तब वे उन्हें प्रपत्ति के बारे में समझाते हैं। वे लोग फिर कहते हैं कि प्रपत्ति का अभ्यास करना तो और भी कठिन है। उस समय अम्माल कहते हैं, ''एम्पेरुमानार (रामानुज स्वामीजी) का चरण कमल ही हमारा एक मात्र आश्रय है। केवल ऐसा

ध्यान करो और यही तुम्हें मुक्ती प्रदान करेगा।'' चरमोपाय निर्णय में भी समान घटना दर्शायी गयी है।

नडातुर अम्माल कुछ श्रीवैष्णवों को श्रीभाष्य का अध्यापन कर रहे थे। उस समय उनमें से कुछ लोग ने कहा ''जीवात्मा द्वारा भक्ति योग का अभ्यास नहीं किया जा सकता क्योंकि वह बहुत कठिन है (उसमें बहुत से अधिकारों की आवश्यकता है जैसे पुरुष होना, त्रिवर्ण-ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एक समान ध्यान और भगवान की सेवा आदि) और प्रपत्ति भी नहीं की जा सकती क्योंकि वह स्वरूप के विरुद्ध है (जीवात्मा पूर्णतः भगवान के आधीन है, चरम लक्ष्य प्राप्त करने के लिए स्वयं के द्वारा किया गया कोई भी कार्य उस पराधीनता के विरुद्ध है) ऐसी स्थिति में, जीवात्मा चरम लक्ष्य को कैसे प्राप्त कर सकता है?'' नडातुर अम्माल कहते हैं ''उनके लिए जो यह सब करने में असमर्थ है, एम्पेरुमानार (रामानुज स्वामीजी) का अभिमान ही परम मार्ग है। इसके अलावा और कोई उपाय नहीं है। मैं इस बात पर दृढ़ता से विश्वास करता हूँ।'' अम्माल के अंतिम निर्देश इस लोकप्रिय श्लोक में समझाया गया है :

प्रयाण काले चतुरस् त्वशिष्याण् पदातिकस्ताण् वरदो ही वीक्ष्य।
भक्ति प्रपत्ति यदि दुष्करेवः रामानुजार्यम् नमतेत्यवादित्।।

उनके अंतिम दिनों में, जब नडातुर अम्माल के शिष्य उनसे पूछते हैं कि हमारे आश्रय क्या है, अम्माल कहते हैं ''भक्ति और प्रपत्ति तुम्हारे स्वरूप के लिए उपयुक्त नहीं है; केवल एम्पेरुमानार (रामानुज स्वामीजी) के चरण शरण होकर पूर्णतः उनके आश्रित हो जाओ; तुम्हें परम लक्ष्य प्राप्त हो जायेगा।''

वार्ता माला में, कई द्रष्टांतों में नडातुर अम्माल को दर्शाया गया है। उनमें से कुछ हम अब देखते हैं :

१) ११८ - एंगलाल्वान नडातुर अम्माल को चरम श्लोक का उपदेश दे रहे थे। ''सर्व धर्मान् परित्यज्य'' समझाते हुए- नडातुर अम्माल सोचते हैं कि भगवान इतनी स्वतंत्रता से शास्त्रों में बताये गए सभी धर्मों (उपायों) का त्याग करने के लिए क्यों कह रहे हैं? एंगलाल्वान कहते हैं- यह भगवान का वास्तविक स्वरूप है- वे पूर्णतः स्वतंत्र हैं- इसलिए उनके लिए ऐसा कहना एकदम उपयुक्त है। इसके अतिरिक्त वे कहते हैं कि भगवान जीवात्मा को किसी भी अन्य उपायों, जो जीवात्मा के वास्तविक स्वरूप के विरुद्ध है, मैं प्रयुक्त होने से बचाते हैं- क्योंकि जीवात्मा पूर्ण रूप से भगवान के आश्रित है, जीवात्मा के लिए भगवान को उपाय स्वीकार करना ही उपयुक्त है। इसलिए, एंगलाल्वान स्पष्टतया समझाते हैं कि यहाँ भगवान के शद्ब सबसे उपयुक्त है।

१९८ - जब नडातुर अम्माल और एक श्रीवैष्णव जिनका नाम आलीपिल्लान था (संभवतया एक अब्राह्मण श्रीवैष्णव या आचार्य पुरुष्कार हीन) एक साथ प्रसाद पा रहे थे, पेरुंगुरपिल्लाई नामक एक अन्य श्रीवैष्णव उसे बहुत आनंद से देखते हैं और कहते हैं ''आपको इन श्रीवैष्णव के साथ स्वतंत्र रूप से घुमते-मिलते देखे बिना, यदि मैं केवल सामान्य निर्देश सुनाता कि वर्णाश्रम धर्म का सब समय पालन करना चाहिए, तो मैं सारतत्व को पूरी तरह से खो देता।'' अम्माल कहते हैं ''सत्य यह है कि कोई भी/ कैसा भी, जो एक सच्चे आचार्य से सम्बंधित हो हमें उसे स्वीकार करके गले से लगा लेना चाहिए। इसलिए एक महान श्रीवैष्णव के साथ घुमते मिलने के मेरे इस अनुष्ठान को विशेष निर्देश (भागवत धर्म) जो हमारे पूर्वाचार्यों द्वारा समझाया गया है के अनुसार समझना चाहिए।''

इस तरह हमने नडातुर अम्माल के गौरवशाली जीवन की कुछ झलक देखी। वे एक महान विद्वान थे और एंगलाल्वान के बहुत प्रिय थे। हम सब उनके श्रीचरण कमलों में प्रार्थना करते हैं कि हम दासों को भी उनकी अंश मात्र भागवत निष्ठा की प्राप्ति हो।

नडातुर अम्माल की तनियन

वंदेहं वरदार्यं तं वत्साबी जनभूषणम्।
भाष्यामृतं प्रदानाद्य संजीवयती मामपि।।

भारतीय दर्शन और श्री हनुमान

आचार्य वाई.वेंकटरमण राव
मोबाइल - ९४४१४५८१९१

भारतीय दर्शन में भक्ति से युक्त परिकल्पनाएँ हैं। उसके केन्द्र में ब्रह्म, विष्णु एवं महेश्वर त्रिमूर्ति हैं। क्रमशः ये तीनों सृष्टि, स्थिति और लय कारक भी माने जाते हैं। इसी क्रम में ज्ञान, रक्षा एवं मंगल की भावनाएँ भी जुडी मिलती हैं। इनके योग में ही मानवता (समस्त जीव कोटि) और लोकमंगल निहित हैं। श्री महाविष्णु सृष्टि के संरक्षक हैं तो उनके पुत्र ब्रह्म सृष्टिकर्ता हैं। शिव तत्त्व (मंगल) लोक की स्थिरता का कारक ही होता है। विष्णु पुत्र ब्रह्म सृष्टिकर्ता है तो सृजन के लिए ज्ञान चाहिए। अतः सरस्वती ज्ञान और बुद्धि से युक्त देवी बनकर ब्रह्म की सहधर्म चारिणी बनी है। जीव समुदाय की सुख-समृद्धि के लिए संपत्ति चाहिए। तदर्थ लक्ष्मी संपत्तिकारणी के रूप में विष्णु की सहचारिणी बनी हैं। शिवता के लिए शक्ति चाहिए। इसी कारण पार्वती (शक्ति) शिव की पत्नी बनी है। शक्ति के साथ विघ्न न होने की आवश्यकता है। अतः पार्वती ने विघ्नेश्वर को रूप दिया। विनायक के रूपायन में शिव और पार्वती दोनों का योगदान हैं। मंगल और शक्ति के साथ अविघ्नता का योग कितना सुंदर बनता है। ज्ञान मिलता है विद्या से। इसीलिए विद्यादेवी के रूप में सरस्वती ब्रह्म की सहचारिणी हैं। विघ्न राज की भी दो पत्नियाँ परिकल्पित हैं - सिद्धि और बुद्धि। इसी प्रकार अन्य देवताओं की परिकल्पनाएँ भारतीय मेधा की उपज हैं। इन्द्रादि देवताओं की परिकल्पना के पीछे लौकिक धर्म प्रबोध निहित हैं। इन सभी की उपासना भारतीय समझ से विस्तृत हुई मान्यता है।

शिव, विष्णु और गणेश के साथ-साथ समस्त भारत में उतनी ही भक्ति के साथ आराध्य देव और कोई हैं तो वे श्री हनुमान ही हैं। हनुमान समस्त भारत के आराध्य हैं। उत्तर और दक्षिण को समग्र रूप से जोडनेवाले महान व्यक्तित्त्व से युक्त भी हैं। भारत में कोई गाँव, शहर, नगर या महानगर नहीं हैं जहाँ भगवान हनुमान की आराधना नहीं होती। श्री हनुमान के मंदिर न हो। ब्रह्म, विष्णु (अनेक अवतारों सहित), शिव और गणेश के साथ उपयुक्त रूप में भारतीयों के मनों में विराजित मूर्ति हैं श्री हनुमान। ब्रह्म के लिए मंदिर नहीं हैं। परन्तु उक्त सभी महान देवताओं की मूर्तियाँ प्रतिष्ठित होकर उनके मंदिर विलसित हैं भारत के सब प्रांतों में।

अब आगे बढेंगे श्री हनुमान की विशेषताओं को समझते हुए। समझने की दिशाओं में कदम बढ़ाते हुए। श्री हनुमानजी के अनेक नाम व्यवहार में हैं - यथा आंजनेय, वायुपुत्र, वायुतनय, वायुनंदन, पवन कुमार, पवन पुत्र, मारुती, मारुत पुत्र, केसरीपुत्र, अंजनापुत्र, वातात्मज, वायु संभव आदि आदि। इनमें बहुत प्रचलित नाम हैं हनुमान और आंजनेय। यद्यपि हनुमान की पूजा आराधनाएँ अनवरत चलती हैं, परन्तु विशेष रूप से समस्त भारत में

मनाने वाली आराधना का दिन हैं ''हनुमज्जयंति'' का दिन। भारतीय समुदाय समस्त विश्व में ''हनुमज्जयंति'' अवश्य मनाता है।

हनुमान/आंजनेय का जन्म दिन वैशाख मास के बहुल नवमी का दिन माना जाता है।

वेंकटाचल से हनुमान का संबन्ध

त्रेतायुग में केसरी की पत्नी अंजनादेवी संतान के अभाव में दुःखी थीं। एक दिन वे मतंग महर्षि के पास गयीं। सभक्ति पूर्वक उन्होंने ऋषि के सामने अपनी व्यथा बतायी। अंजनादेवी की भावना को समझकर मतंग महर्षि ने उन्हें आदेश दिया - ''हे देवी! पंपा सरोवर के पूर्व भाग में पचास योजन की दूरी पर नृसिंहक्षेत्र है। उसके दक्षिण में नारायणगिरि (नारायणाद्रि) है। उसके उत्तर पार्श्व में श्रीस्वामिपुष्करिणी है। उससे एक कोस की दूरी पर आकाश गंगा है। वहाँ जाकर द्वादश वर्ष की तपस्या करना। उसके पुण्य फल के रूप में आपको सुपुत्र की प्राप्ति होगी।'' महर्षि के सांत्वनापूर्ण शब्द अंजनादेवी के लिए अत्यंत सुखद रहें।

मुनि के आदेशानुसार अंजनादेवी ने स्वामिपुष्करिणी में पवित्र स्नान किया। अश्वत्थ वृक्ष की परिक्रमा की। श्री वराहस्वामी का दर्शन किया। आकाश गंगा तीर्थ पहुँची। अपने पतिदेव और अन्य मुनियों से अनुमति लेकर निराहार नियम के साथ तपस्या रत हुई। व्रत-तपस्या के साथ-साथ महाबली वायुदेव के वीर्य प्रपूर्ति फल अंजनादेवी को इच्छित फल मिला। गर्भवती हुई। वायु सम बलवान पुत्र हुआ। अंजनादेवी के तपस्या-स्थल प्रांत के होने के कारण सप्तगिरियों में से एक को अंजनाद्रि नाम भी मिला है। भगवान श्री वेंकटेश्वर के मंदिर के ठीक सामने श्री हनुमान का मंदिर विराजित है।

वाल्मीकि रामायण के अनुसार...

वाल्मीकि रामायण के अनुसार एक शाप ग्रस्त अप्सरा के गर्भ से वायु द्वारा हनुमान को जन्म मिलने की बात हमारे सामने आती है। उस अप्सरा का नाम पुंजिकस्थला है। वही वानर योनि में

जन्म लेकर केसरी की पत्नी बनती है। कामरूपिणी होने के कारण मानवी बनकर मारुत के संपर्क में आकर एक वीर्यवान, बुद्धि संपन्न पुत्र पाने के वरदान से युक्त होती है। वायुदेव ने उस वक्त कहा था- ''शक्ति और वेग में वह मेरे ही समान होगा।'' (किष्किंधा काण्ड सर्ग ६६, श्लोक १८, १९)

तुलसी रामचरितमानस में...

भक्तवर तुलसीदास ने 'रामचरितमानस', 'विनयपत्रिका' और 'कवितावली' में मुक्तकण्ठ से हनुमान की वंदना और प्रशंसा की है। तुलसी ने घोषित किया है -

पवन तनय बल पवन समाना। बुधि विवेक बिग्यान निधाना।
कबन सो काज कठिन जग माहीं। जो नहिं होत तात तुम्ह पहीं।।

(मानस, ४/३०/४-५)

हनुमान में शिवजी के अंश होने की बात भी मिलती है। हमारे पुराणों में भी व्याप्त है। हनुमान को शिव के ग्यारहवें रुद्रावतार भी माना गया है। लोक रक्षार्थ विष्णु और शिव के

परस्पर जुडने के अनेक पौराणिक संदर्भ हमारे सामने आते हैं। समय की आवश्यकता के अनुसार शिव और विष्णु परस्पर सहायता कर लेते हैं। उदाहरण के रूप में भस्मासुर राक्षस के संहार के संदर्भ में। रामायण में हनुमान के रूप में शिव तत्त्व विष्णु अवतार राम की सहायता में दिखाई देता ही है।

हनुमान की विशेषताएँ

हनुमान शक्ति, आस्था, भक्ति, ज्ञान, वैराग्य, बहादूरी, सेवा-भाव, निस्वार्थ कर्म भावना आदि अनेक सद् गुणों के युक्त हैं। भक्ति के अनेक रूप भारतीय परंपरा में उभरे हैं - यथा वात्सल्य भक्ति, विरह भक्ति, दास्य भक्ति, सगुण भक्ति, निर्गुण भक्ति आदि। इनमें दास्य भक्ति के असम व्यक्तित्व से उभरे हुए है श्री हनुमानजी।

हनुमान का पांडित्य अतुलनीय है। इनके गुरु स्वयं सूर्य देव है। सूर्य और विष्णु में अभेद है। सूर्यनारायण से हनुमान ने व्याकरण की शिक्षा पायी है। सूर्य को गेन्द समझकर उन्हें निगलने आसमान में उडने और उस संदर्भ में इन्द्र के वज्रायुध से उनकी हनु के आहत होने की बात प्रसिद्ध है। उसी कारण वे हनुमान भी कहलाये हैं। रामचन्द्र और हनुमान का प्रथम मिलन ही उत्तम घटना है। रामने हनुमान की बातें सुनकर लक्ष्मण से हनुमान की प्रशंसा की है। उस से हनुमान की विद्वात्ता, बात करने की पटुता, वार्तालाप के संदर्भ में व्यवहार और विनम्रता आदि स्पष्ट होते हैं। उस संदर्भ रामने कहा था -

संस्कार क्रम संपन्नां अद्‌भुतामविलम्बिताम्।
उच्चारयति कल्याणीं वाचं हृदयहर्षिणीम॥

इस से हनुमान का वेदत्रयी का ज्ञान, व्याकरण की पटुता, अभिव्यक्ति की भंगिमा, विज्ञता, हृदय की निर्मलता आदि का परिचय हमें मिलता है। ये सब मनुष्यों के लिए अनुकरणीय हैं।

'रामने हनुमान से अंत में कहा था -

सुनु कपि तोहि समान उपकारी।
नहिं कोउ सुर नर मुनि तनुधारी॥

प्रति उपकार करौ का तोरा।
सनमुख होइ न सकत मन मोरा॥ (रामचरितमानस)

ऐसी बातें सुनकर हनुमान क्या कर सकता है -

सुनि प्रभु वचन बिलोकि मुख गात हरषि हनुमंत।
चरन परेउ प्रेमाकुल त्राहि-त्राहि भगवंत॥

रामायण के सप्त कांड हैं - बाल कांड, अयोध्या कांड, अरण्य कांड, किष्किंधा कांड, सुंदर कांड, युद्ध कांड और उत्तर कांड। प्रथम छः रामकथा से संबद्ध है। उनमें प्रथम तीन के नायक रामचंद्र हैं तो द्वितीय तीन के नायक श्री हनुमान ही हैं। सुंदर कांड तो पूरा उन्ही का हैं। सुंदर कांड के सब कार्य सुंदर ही हैं। सुंदर कांड के कार्यों के कारण ही हनुमान ''बाहुबली'' हैं।

तुलसीदास ने हनुमान की जो वंदना ''हनुमानचालीसा'' में की है वह अन्यतम है। उस के अनुसार हनुमान ज्ञानगुण सागर हैं, अतुलित बलधाम हैं, महावीर हैं, तेज प्रतापी हैं। इतना ही नहीं -

प्रभु चरित्र सुनिबे को रसिया।
राम लखन सिया मन बसिया॥

भूत पिशाच निकट नहिं आवै।
महावीर जब नाम सुनावै॥

और देवता चित्त न धरई।
हनुमत सेयि सर्व सुख करई॥

श्री आंजनेय अष्टोत्तर शतनामावलि

श्री आंजनेय अष्टोत्तर शतनामावलि

ॐ आंजनेयाय नमः
ॐ महावीराय नमः
ॐ हनुमते नमः
ॐ मारुतात्मजाय नमः
ॐ तत्त्वज्ञानप्रदाय नमः
ॐ सीतादेवीमुद्राप्रदायकाय नमः
ॐ अशोकवनिकाच्छेत्रे नमः
ॐ सर्वमायाविभंजनाय नमः
ॐ सर्वबंधविमोक्त्रे नमः
ॐ रक्षोविध्वंसकारकाय नमः (१०)

ॐ परविद्या परिहर्त्रे नमः
ॐ परशौर्य विनाशनाय नमः
ॐ परमंत्र निराकर्त्रे नमः
ॐ परयंत्र प्रभेदकाय नमः
ॐ सर्वग्रह विनाशकाय नमः
ॐ भीमसेनसहायकृते नमः
ॐ सर्वदुःखहराय नमः
ॐ सर्वलोकचारिणे नमः
ॐ मनोजवाय नमः
ॐ पारिजातद्रुमूलस्थाय नमः (२०)

ॐ सर्वमंत्र स्वरूपवते नमः
ॐ सर्वतंत्र स्वरूपिणे नमः
ॐ सर्वयंत्रात्मिकाय नमः
ॐ कपीश्वराय नमः
ॐ महाकायाय नमः
ॐ सर्वरोगहराय नमः
ॐ प्रभवे नमः
ॐ बलसिद्धिकराय नमः
ॐ सर्वविद्यासंपत्प्रदायकाय नमः
ॐ कपिसेनानायकाय नमः (३०)

ॐ भविष्यच्चतुराननाय नमः
ॐ कुमारब्रह्मचारिणे नमः
ॐ रत्नकुंडलदीप्तिमते नमः
ॐ चंचलद्वाल सन्नद्धलंबमान शिखोज्ज्वलाय नमः
ॐ गंधर्व विद्यातत्त्वज्ञाय नमः
ॐ महाबलपराक्रमाय नमः
ॐ कारागृह विमोक्त्रे नमः
ॐ श्रृंखलाबंधविमोचकाय नमः
ॐ सागरोत्तारकाय नमः
ॐ प्राज्ञाय नमः (४०)

ॐ रामदूताय नमः
ॐ प्रतापवते नमः
ॐ वानराय नमः
ॐ केसरीसुताय नमः
ॐ सीताशोक निवारणाय नमः
ॐ अंजना गर्भसंभूताय नमः
ॐ बालार्कसदृशाननाय नमः
ॐ विभीषण प्रियकराय नमः
ॐ दशग्रीव कुलांतकाय नमः
ॐ लक्ष्मण प्राणदात्रे नमः (५०)

ॐ वज्रकायाय नमः
ॐ महाद्युतये नमः
ॐ चिरंजीविने नमः
ॐ रामभक्ताय नमः
ॐ दैत्यकार्य विघातकाय नमः
ॐ अक्षहंत्रे नमः
ॐ कांचनाभाय नमः
ॐ पंचवक्त्राय नमः
ॐ महातपसे नमः
ॐ लंकिणीभंजनाय नमः (६०)

ॐ श्रीमते नमः
ॐ सिंहिकाप्राणभंजनाय नमः
ॐ गंधमादन शैलस्थाय नमः
ॐ लंकापुर विदाहकाय नमः
ॐ सुग्रीव सचिवाय नमः
ॐ धीराय नमः
ॐ शूराय नमः
ॐ दैत्यकुलांतकाय नमः
ॐ सुरार्चिताय नमः
ॐ महातेजसे नमः (७०)

ॐ रामचूडामणि प्रदाय नमः
ॐ कामरूपिणे नमः
ॐ पिंगलाक्षाय नमः
ॐ वर्धिमैनाकपूजिताय नमः
ॐ कबलीकृत मार्तांडमंडलाय नमः
ॐ विजितेंद्रियाय नमः
ॐ रामसुग्रीव संधात्रे नमः
ॐ महिरावणमर्दनाय नमः
ॐ स्फटिकाभाय नमः
ॐ वागधीशाय नमः (८०)

ॐ नवव्याकृति पंडिताय नमः
ॐ चतुर्बाहवे नमः
ॐ दीनबंधवे नमः
ॐ महात्मने नमः
ॐ भक्तवत्सलाय नमः
ॐ संजीवन नगाहर्त्रे नमः
ॐ शुचये नमः
ॐ वाग्मिने नमः
ॐ दृढव्रताय नमः
ॐ कालनेमि प्रमथनाय नमः (९०)

ॐ हरिर्मर्कट मर्कटाय नमः
ॐ दांताय नमः
ॐ शांताय नमः
ॐ प्रसन्नात्मने नमः
ॐ दशकंठ मदापहाय नमः
ॐ योगिने नमः
ॐ रामकथालोलाय नमः
ॐ सीतान्वेषण पंडिताय नमः
ॐ वज्रदंष्ट्राय नमः
ॐ वज्रनखाय नमः (१००)

ॐ रुद्रवीर्य समुद्भवाय नमः
ॐ इंद्रजित्प्रहितामोघ ब्रह्मास्त्रविनिवर्तकाय नमः
ॐ पार्थध्वजाग्र संवासाय नमः
ॐ शरपंजर हेलकाय नमः
ॐ दशबाहवे नमः
ॐ लोकपूज्याय नमः
ॐ जांबवत्प्रीतिवर्धनाय नमः
ॐ सीतासमेता श्रीरामपादसेवा दुरंधराय नमः (१०८)

॥ इति श्री आंजनेयाष्टोत्तर शतनामावलि संपूर्णम् ॥

कोरोना वायरस के विजृंभण से मानवाली के संरक्षणार्थ ति.ति.दे. द्वारा आयोजित किये गये श्री श्रीनिवास शांत्योत्सव सहित धन्वंतरी महायाग, श्रीनिवास वेदमंत्र आरोग्य जपयज्ञ के दृश्य।

श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी (तिरुक्कोष्टियूर नम्बी)

श्रीमती लक्ष्मीनिवास कब्रा
मोबाइल - ८८६७५२९७४०

श्रीवल्लभ पदाम्भोज धीभक्त्यामृत सागरं।
श्रीमद् घोष्टिपूर्ण देशिकेन्द्रम् भजामहे।।

जन्मनक्षत्र : वैशाख, रोहिणी नक्षत्र

अवतार स्थल : तिरुक्कोष्टियूर

आचार्य : श्री यामुनाचार्य स्वामीजी

शिष्य : श्रीरामानुज स्वामीजी

पेरियाल्वार ने अपने 'पेरियाल्वार तिरुमोळि' में तिरुक्कोष्टियूर दिव्यदेश की बड़ी प्रशंसा की है। तिरुक्कुरुगै पिरान, जिनका जन्म इस सुन्दर दिव्यदेश में हुआ था, तिरुक्कोष्टियूर नम्बी नाम से प्रसिद्ध हुए और वे यामुनाचार्य स्वामीजी (आळवन्दार) के प्रमुख शिष्यों में से एक थे। उन्हें गोष्ठीपूर्ण या गोष्ठीपुरिसर नाम से भी जाना जाता है।

श्री यामुनाचार्य स्वामीजी ने अपने पांच प्रमुख शिष्यों को विभिन्न सिद्धांतों के अध्यापन का निर्देश दिया था। इनमें से श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी को रहस्य त्रय - तिरुमंत्र, द्वय मंत्र और चरम श्लोक सिखाने का उत्तरदायित्व दिया गया था।

श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी ने श्री यतिराज को "एम्पेरुमानार" नाम से सम्मानित किया क्योंकि उन्होंने बिना किसी शर्त के चरम श्लोक का अर्थ उन सभी के साथ साझा किया, जो उसे जानने के लिए इच्छुक थे, जो यतिराज के निःस्वार्थ कृत्य को दर्शाता है। श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी श्री यामुनाचार्य द्वारा सिखाये गए रहस्य त्रय के दिव्य अर्थों का अनुसन्धान करते हुए निरंतर भगवान के ध्यान में रहते थे और किसी से ज्यादा बातचीत नहीं करते थे। उनके गाँव में कोई उनकी कीर्ति नहीं जानता था। श्रीरामानुज स्वामीजी श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी के यश को जानकर चरम श्लोक के अति गोपनीय अर्थ को सीखने के लिए श्रीरंगम से तिरुक्कोष्टियूर १८ बार चल कर गए। अंततः १८वीं बार में श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी उन्हें चरम श्लोक के अति गोपनीय अर्थ का उपदेश देने का निर्णय लेते हैं। श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी श्री यतिराज से वचन लेते हैं की वे किसी भी अयोग्य व्यक्ति या ऐसे अधिकारी जिसने उस गूढ़ रहस्य के अर्थ को जानने के लिए बहुत कठिन प्रयास न किये हो, उसे इस ज्ञान का उपदेश नहीं देंगे। श्रीरामानुज स्वामीजी उस समय उसे स्वीकार करते हैं और वचन देते हैं। तब नम्बी उन्हें चरम श्लोक का अति गोपनीय ज्ञान सिखाते हैं। गीताचार्य का "सर्व धर्मान परित्यज्य" श्लोक (गीता - १८.६) ही चरम श्लोक है। इस श्लोक में "एकम" शब्द के माध्यम से बहुत ही महत्वपूर्ण सिद्धांत दर्शाया गया है- जिसका आशय है की केवल भगवान ही जीव के लिए उपाय है। इसके अतिरिक्त और कुछ भी, जैसे कर्म, ज्ञान, भक्ति

योग, हमारी स्वयं की प्रपत्ति (समर्पण), आदि वास्तविक उपाय नहीं है। जब यह गोपनीय अर्थ किसी अयोग्य अधिकारी को बताया जाता है तब वह उसका आसानी से अपने कर्तव्यों को न निभाकर दुरुपयोग कर सकता है। इसलिए श्रीरामानुज स्वामीजी के समय तक आचार्यों ने बहुत सावधानी से उसकी रक्षा की। परन्तु श्रीरामानुज स्वामीजी ने इस गोपनीय अर्थ को सीखने के तुरंत बाद उन सभी को एकत्र किया जो उस रहस्य को जानने के लिए तत्पर थे और उन्हें विस्तार से चरम श्लोक का अर्थ समझाया। रामानुजजी के इस रहस्योद्घाटन के बारे में सुनकर नम्बी तुरंत उन्हें बुलवाते हैं। रामानुजजी जब नम्बी के निवास पर पहुँचते हैं तो नम्बी उनसे उनके इस कृत्य के बारे में पूछते हैं और रामानुजजी गुरु के आदेश की अवहेलना किये जाने को स्वीकार करते हैं। जब नम्बी उनसे पूछते हैं कि उन्होंने ऐसा क्यों किया तो रामानुजजी कहते हैं, ''मैं आपके आदेश की अवहेलना करके नरक में जाऊंगा पर दूसरे बहुत से लोगों को (जिन्होंने चरम श्लोक का अर्थ सुना) मोक्ष प्राप्त होगा और उनका उद्धार होगा।'' दूसरों को सच्ची आध्यात्मिक सहयता प्रदान करने वाले, रामानुजजी के विशाल हृदय को देखकर नम्बी अभिभूत हो जाते हैं और उन्हें ''एम्पेरुमानार'' (मन्नाथ) का विशेष नाम प्रदान करते हैं। एम्पेरुमान् का अर्थ है मेरे स्वामी (भगवान) और एम्पेरुमानार का अर्थ है जो भगवान से भी अधिक दयालु है। इस प्रकार तिरुक्कोष्टियूर में चरम श्लोक के गूढ़ अर्थ का रहस्योद्घाटन करके रामानुजजी एम्पेरुमानार हो गए। यह चरित्र (दृष्टांत), श्री वरवरमुनि स्वामीजी ने मुमुक्षुपडि व्याख्यान परिचय के चरम श्लोक प्रकरण (भाग/खंड) में बहुत स्पष्टता और सुंदरता से समझाया है।

नोट - ६००० पडी गुरु परंपरा प्रभाव में यह बताया गया है कि श्रीरामानुज स्वामीजी ने तिरुक्कोष्टियूर नम्बी से तिरुमंत्र का अर्थ सीखकर सबको बता दिया और उस वजह से नम्बी ने उन्हें एम्पेरुमानार नाम दिया और फिर बाद में उन्होंने चरम श्लोक का अर्थ सीखा। परन्तु वरवरमुनि स्वामीजी ने स्पष्ट रूप से समझाया है कि जो एम्पेरुमानार द्वारा उद्घोषित हुआ था वो चरम श्लोक था और इस व्याख्यान के और भी दृष्टांतों (घटनाओं) से यह उपयुक्त लगता है। क्योंकि चरम श्लोक के ''एकम'' शब्द को बहुत गोपनीय सिद्धांत घोषित किया गया है, हम उसे प्रमाण के रूप में स्वीकार करते हैं (जैसे आचार्यों से सुना है)।

आचार्यों के अनेकों व्याख्यान में श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी के यश को दर्शाया गया है। उनमें से कुछ हम अब देखते हैं :

१) नाच्चियार तिरुमोळि १२.२ - पेरियावाच्चन पिल्लै व्याख्यान।

२) यहाँ श्री गोदादेवी (आण्डाल) को नम्बी के समान बताया गया है। जिस तरह से श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी अपने भगवद अनुभव किसी और से व्यक्त नहीं करते थे ठीक उसी तरह ऐसा कहा जाता है की आण्डाल भी भगवान से वियोग की पीड़ा किसी से प्रकट नहीं करती थी।

३) तिरुक्कोष्टियूर के स्थानीय निवासी गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी की वास्तविक महानता को तब तक नहीं जान पाये जब तक रामानुजजी वहाँ नहीं पहुँचे थे। जब रामानुजजी तिरुक्कोष्टियूर पहुँचे उन्होंने तिरुक्कुरुगै पिरान (गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी का वास्तविक नाम जो शठकोप स्वामीजी के नाम पर था) के निवास के बारे में पूछा और उनके निवास की दिशा की ओर नीचे लेटकर दंडवत प्रणाम किया। जिनकी पूजा स्वयं रामानुजजी करते हैं, ऐसे गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी की कीर्ति को स्थानीय लोग तब समझ पाये।

४) दाशरथि स्वामीजी और कूरेश स्वामीजी दोनों ने सम्प्रदाय के बहुमूल्य अर्थों को समझने के लिए ६ महीने गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी के चरण कमलों कि सेवा की।

५) हर बार जब श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी श्रीरंगम आते थे, उनके लौटने पर श्रीरामानुज स्वामीजी उन्हें विदा करने के लिए मारच्चिप्पुरम (श्रीरंगम के पास एक स्थान) तक उनके साथ जाते थे। एक समय गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी के लौटने पर यतिराज उनसे प्रार्थना करते हैं कि वे उन्हें ऐसी आज्ञा दे जिस पर वो आश्रय कर सके। गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी कहते हैं - जब श्री यामुनाचार्य स्वामीजी नदी में नहाते हुए डुबकी लगाते थे, तब उनके पीठ का ऊपर का भाग कूर्मासन के पीठ के समान दिखाई देता था (एक आसन जो कछुए के कवच की तरह दिखता है)। श्री यामुनाचार्य स्वामीजी के परमपद गमन के बाद भी मैं उनकी पीठ के उसी दृश्य का नित्य ध्यान करता हूँ। तुम भी उसी पर भरोसा करो। इस घटना से नम्बी दर्शाते हैं की शिष्य को आचार्य के प्राकृत शरीर (दिव्य स्वरूप) पर वैसा ही लगाव होना चाहिए जैसा की उनके निर्देशों और ज्ञान के प्रति है।

६) श्री यामुनाचार्य स्वामीजी कहते हैं कि वे ज्ञानापिरान को ही एकमात्र उपाय स्वीकार करते हैं। यह चरम श्लोक के ''एकम'' शब्द को समझाता है जो अन्य उपयों को अलग करके यह स्थापित करता है कि भगवान ही एकमात्र उपाय है। यह हमारे संप्रदाय का बहुत ही गोपनीय सिद्धांत है जो श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी ने रामानुजजी को सिखाया था। एक बार उत्सव के लिए श्रीरंगम पधारे हुए श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी, यतिराज को श्रीरंगम मंदिर में एक एकांत स्थान पर बुलाते हैं और ''एकम'' शब्द के अर्थ समझाना शुरू करते हैं। लेकिन तभी वे खर्राटे लेते हुए गहरी नींद में सोये हुए मंदिर के एक अधिकारी को देखते हैं और यह कहते हुए कि यहाँ कोई है, तुरंत अर्थ की व्याख्या करना छोड देते हैं। परन्तु फिर बाद में वह श्री यतिराज को अर्थ का उपदेश देते हैं और उन्हें यह निर्देश भी देते हैं की वे उस अर्थ को केवल योग्य व्यक्ति को ही बताये। उसी समय तपते सूरज और चमकती दोपहर में दौड़ते हुए श्रीरामानुज स्वामीजी, कूरेश स्वामीजी के निवास स्थान पर जाते हैं और उन्हें यह गोपनीय अर्थ बता देते हैं। इस प्रकार कूरेश स्वामीजी द्वारा कोई विशेष प्रयास न होने पर भी उन्हें अर्थ समझाकर यतिराज ने ''सहकारी निरपेक्ष्यता'' का प्रमाण दिया है (हमारे उद्धार के लिए हमारी ओर से किसी भी कार्य की आशा न करते हुए, स्वयं कृपा करना)।

७) तिरुविरुत्तम् ९५ - इस पाशुर के व्याख्यान में, यह बताया है कि श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी के एक शिष्य नंजीयर बताते है कि यह पाशुर श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी का प्रिय पाशुर है। इस पाशुर में यह दर्शाया गया है कि जीवात्मा भले ही निरंतर लौकिक अनुष्ठानों में संलग्न रहती है पर भगवान फिर भी सदा ही उस पर कृपा करते हैं और उसका कल्याण करते हैं।

८) तिरुवाय्मोळि १.१०.६ - नम्पिल्लै व्याख्यान - इस पाशुर में आल्वार अपने ही मन से चर्चा करते हैं। इसके अर्थ को समझाने के लिए नम्पिल्लै कहते हैं कि भगवद विषय बहुत उच्च्य विषय है और हर कोई इसे नहीं समझ सकता। जैसे श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी एकांत में इस विषय का चिंतन निरंतर किया करते थे, वैसे ही आल्वार भी भगवद विषय की चर्चा स्वयं अपने मन से करते हैं।

९) तिरुवाय्मोळि ८.८.२ - एक बार यतिराज के व्याख्यान में जीवात्मा के स्वरूप (प्रकृति) पर प्रश्न हुआ कि जीवात्मा ज्ञातृत्व (ज्ञानी / जानने वाली) है या शेषत्व

(भगवान की सेवक) है? यतिराज श्री कूरेश स्वामीजी को निर्देश देते हैं कि वे इस अर्थ को सीखने के लिए श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी के पास जाये। कूरेश स्वामीजी तिरुक्कोष्टियूर जाते हैं और ६ महीने तक श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी की सेवा करते हैं। अंततः नम्बी श्री कूरेश से उनके आने का उद्देश्य पूछते हैं, तो कूरेश स्वामीजी उन्हें प्रश्न के बारे में बताते हैं। नम्बी कहते हैं आल्वार ने ‘‘अडियेन उल्लान’’ के द्वारा जीवात्मा के स्वरूप को प्रमाणित किया है, जिसका तात्पर्य है कि जीवात्मा सेवक है- स्वरूप से भगवान का दास है। फिर कूरेश स्वामीजी पूछते हैं - तो वेदांतम उसे ज्ञातृत्व (ज्ञानी / जानने वाली) क्यों बताती है? श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी कहते हैं वो इसलिए क्योंकि यहाँ जीवात्मा के ज्ञाता होने का आश्रय उसके यह जानने से है कि वह भगवान का सेवक/दास है। इसलिए जीवात्मा का वास्तविक स्वरूप वह है जो आल्वार और नम्बी ने बताया है, जीवात्मा वह है जिसे इस बात का ज्ञान है कि वह भगवान का अधीन है।

एक बार जब श्री मालाधर स्वामीजी सहस्त्रगीति के किसी एक गाथा का संप्रदाय विरुद्ध अर्थ कहते है तो यतिराज उस व्याख्यान को रोक देते है। श्री मालाधर स्वामीजी उसे अनुचित समझकर सहस्त्रगीति का उपदेश देना बंद कर देते है। तब श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी उस निर्गम को सुलझाते हैं और श्री मालाधर स्वामीजी को समझाते हैं कि श्री यतिराज एक अवतार पुरुष है जो हर तरह से सुविज्ञ है और यामुनाचार्य के हार्दिक अभिप्राय को जानते है। श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी की वाणी सुनकर श्री मालाधर स्वामीजी पहले की भांति ही सहस्त्रगीति का उपदेश जारी रखते है।

एक बार जब कुछ शरारती तत्त्व यतिराज को जहर देते हैं, तब इस बारे में जानकर यतिराज उपवास शुरू कर देते हैं और प्रसाद ग्रहण नहीं करते हैं। उस समय श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी तिरुक्कोष्टियूर से आते हैं और तप्ती दोपहर में कावेरी नदी के तीर पर यतिराज उनसे मिलने जाते हैं। यतिराज उस तप्ती गर्म रेत पर श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी को साष्टांग प्रणाम (दंडवत प्रणाम) करते हैं तब स्वामीजी मौन खड़े रहकर उन्हें देखते रहते हैं। प्रणतार्तिहराचार्य स्वामीजी, जो यतिराज के शिष्य थे तुरंत उन्हें गर्म रेत से उठाते हैं और श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी के इस कार्य को चुनौती देते हैं। श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी कहते हैं कि उन्होंने यह आडम्बर यह जानने के लिए किया कि यतिराज के प्राकृत शरीर (दिव्य स्वरूप) पर सबसे ज्यादा लगाव किसको है। तद्पश्चात श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी प्रणतार्तिहराचार्य स्वामीजी को नियमित रूप से यतिराज के लिए प्रसाद बनने का निर्देश देते हैं। इस तरह हम देख सकते हैं कि श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी यतिराज से बहुत प्रभावित थे और हमेशा उनके कल्याण के बारे सोचते थे।

इन सभी द्रष्टांतों के माध्यम से हमने देखा कि श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी के कई वैभव हैं और उन्होंने ही रामानुजजी को एम्पेरुमानार का सुंदर नाम दिया था। जिसके फलस्वरूप स्वयं नम्पेरुमाल ने हमारे संप्रदाय को एम्पेरुमानार दर्शन नाम से उध्बोधित किया है, जिसे श्री वरवरमुनि स्वामीजी ने अपनी उपदेश रत्न माला में बताया है।

हम श्री गोष्ठीपूर्ण स्वामीजी के श्रीचरण कमलों में साष्टांग करते हैं, जिनका आळवंदार और एम्पेरुमानार के प्रति विशेष लगाव था।

(गतांक से)

सियाराम ही उपाय

शरणागति मीमांसा

(पंचम खण्ड)

सियाराम ही उपेय

मूल लेखक
श्री सीतारामाचार्य स्वामीजी, अयोध्या

प्रेषक
दास कमलकिशोर हि. तापडिया
मोबाइल - ९४४९५१७८७९

१७

श्रीमते रामानुजाय नमः

जो सिर्फ प्रत्यक्षवादी हैं वे सौ जन्म में भी अपने गोत्र, जाति और बाप का निश्चय नहीं कर सकते। क्योंकि ये तीनों अदृष्ट बातें हैं। इन तीनों पर तो दूसरों के कहने से ही विश्वास करना पड़ता है। देखे बिना भी अचल विश्वास करने पर ही जगत का लौकिक तथा पार लौकिक व्यवहार बनता है और अपनी मूर्खताबश जो देखूँगा वही मानूँगा इसी का हठ करेगा उसका लौकिक तथा बैदिक व्यवहार सिद्ध नहीं हो सकता है। जैसे कि वह बिगड़े दिमाग वाला प्रत्यक्षवादी सौदागरसिंह दुर्दशा में पड़ा। जब कि लोक में भी परवश ऐतिह्य यानी शद्ब प्रमाण को मान कर ही काम चलाना पड़ता है और एक दो बिगड़े हुए दिमाग वालों को छोड़ कर सभी दुनियाँ ऐतिह्य प्रमाण को मानती ही है, और उस पर दृढ़ विश्वास करके अपना व्यवहारिक तथा पारमार्थिक कार्य कर रही है, तो परमात्मा के प्रसंग में एक कण्ठ से लाखों आस्तिक महात्माओं के मानने कहने पर भी यदि कोई सौदागरसिंह का भाई बन कर कहे कि परमात्मा और परमपद अदृष्ट विषय हैं यानी परोक्ष विषय हैं, इनको प्रत्यक्ष देखे बिना इसमें से संशय और भ्रम कैसे जा सकता है और इन पर कैसे विश्वास किया जा सकता है। तो उसकी कही हुई बात का सच्चे आस्तिक मुमुक्षुओं की सभा में बिल्कुल आदर नहीं हो सकता, जब कि माता के कहने से पिता होने का पूर्ण विश्वास लोक में किया जाता है और सब उसको मानते ही हैं तो लाखों वर्ष, सम्पूर्ण संसार के सुखों को छोड़ कर एकान्त निर्जन स्थल में जाकर तपश्चर्या करके, परमात्मा का साक्षात्कार करके जिन व्यास, पराशर, वाल्मीकि आदि मुनियों ने अपने ग्रन्थों में तत्त्व निर्णय किया है उन महामुनियों के वचनों के अनुसार परमात्मा और परमपद के बाबत कृपा करके उपदेश करने वाले जो सद्गुरु लोग हैं, उनके बचनों के द्वारा कौन है कि जो संशय भ्रम को छोड़ कर पूर्ण विश्वास नहीं कर सकता है और इतना समझाने पर भी यदि मन्द भागी कोई जीव संशय भ्रम में ही पड़ा रहेगा और गुरु में, भगवान में, परंधाम में अटल विश्वास नहीं करेगा तो सौदागरसिंह के समान सद्गोष्ठी से बहिष्कृत होगा। हरि भक्तों में, सत्समाज में उसका आदर नहीं होगा। फिर उसका मनुष्य जीवन भी व्यर्थ चला जायगा। फिर वही मसल होगा कि ''सो परत्र दुःख पावई शिर धुनि-धुनि पछिताय। कालहिं कर्महिं ईश्वरहिं मिथ्या दोष लगाय।'' फिर समय निकल जाने पर पछताने से कुछ हाथ नहीं लगेगा। इससे महात्माजी! जिनको अपने कल्याण की चाहना हो, संसार से छुटकारा पाना हो, उसे तो सब से पहिले सद्गुरुओं के बचनों पर अवश्य विश्वास करना ही पड़ेगा क्योंकि बड़ों का बचन है कि :-

''बिन विश्वास भगती नहीं, तेहि बिनु मोह न भाग।
मोह गये बिनु राम पद, होइ न दृढ़ अनुराग।।''

यानी जिसको दृढ़ विश्वास नहीं होगा उससे भलीभाँति भगवत्सेवा भजन हो ही नहीं सकता और बिना भक्ति किये मोह भी नहीं भाग सकता और मोह के बिना गये श्रीरामजी के चरणों में दृढ़ प्रीति भी नहीं हो सकती है। और भी कहा है कि :-

''कौने उ सिद्धि कि बिनु विश्वासा।
बिनु विश्वास न संशय नाशा''।।

सद्गुरुओं के बचनों में विश्वास के बिना किसी प्रकार की सिद्धि हो ही नहीं सकती। इसी से पहुँचे हुए महात्माओं का कहना है कि ''विश्वास करि यह दास तुलसी रामपद अनुराग हूँ'' इन सबों के कहने का सारांश यही हुआ कि जिसको बड़ों के बचन में विश्वास होगा उन्हीं से भजन, कीर्त्तन, सेवा वगैरह सब कुछ बन सकेगा सद्गुरुओं के बचनों के अनुसार जो लोग भगवन्नाम का जप करेंगे, प्रभु का ध्यान करेंगे, भगवान की, भागवतों की, आचार्यों की सेवा करते रहेंगे, उन्हें सब प्रकार की सिद्धि प्राप्त होगी। इसी तरह करते-करते धीरे-धीरे उन्हें भगवान का साक्षात्कार भी होगा, उन्हें परंधाम भी मिलेगा और जो भगवान में, सद्गुरुओं में, शास्त्रों में तर्क वितर्क करते रहेंगे, संशय भ्रम में पड़े रहेंगे, विश्वास न करेंगे वे परमार्थ पथ से भ्रष्ट हो जावेंगे। अतः हे महात्माओं! सब से पहिले मुमुक्षुओं को चाहिए कि संशय भ्रम को जड़ मूल से छोड़ कर बड़ों के बचनों में अचल विश्वास पूर्वक प्यारे परमात्मा का भजन, कीर्त्तन, जप, ध्यान, सेवा निरंतर शक्ति के अनुसार किया करें। महात्मा लक्ष्मी प्रपन्न जी! आपके प्रश्न के उत्तर में चार प्रकार के प्रमाण कहा था। जिनमें प्रत्यक्ष, अनुमान, ऐतिह्य का संक्षेप में वर्णन हो चुका ये तीनों प्रमाण जहाँ काम नहीं देते हैं वहाँ शास्त्रों के जरिये काम लिया जाता है। जिसका वर्णन मैं आगे करता हूँ ध्यान देकर श्रवण करिये। जैसे परमपद को यहाँ से कोई देखता नहीं है न वहाँ से कोई आकर कहता है कि परमपद ऐसा है, मैं देखकर आया हूँ न यहाँ से कोई जाकर वहाँ का ऐश्वर्य बताने के लिए फिर यहाँ आता है। वहाँ की तो यही प्रसिद्धि है कि जाकर फिर यहाँ कोई लौटकर नहीं आता। उसी परमपद को वैकुण्ठलोक कहते हैं। श्री गोलोक धाम तथा विष्णु भगवान का परमपद भी कहते हैं। उसीको दिव्य मुक्ति स्थान और श्री अयोध्या भी कहते हैं। इस प्रकार अनेक शब्दों में उस दिव्यधाम की प्रख्याति है। वह चौदह लोक से भी ऊपर है, बहुत दूर है। उसके बाबत मुनियों के इस प्रकार बचन हैं कि पचास करोड़ योजन में यह ब्रह्माण्ड है। उसके दसगुने ऊपर पानी का हिस्सा है। उसके ऊपर दसगुना अग्नि

है, उसके ऊपर दसगुना वायु है, वायु के ऊपर दसगुना आकाश है, उसके ऊपर दसगुना महातत्व है, उससे ऊपर दसगुना अहंकार है, उससे ऊपर दसगुना मूल प्रकृति तत्त्व है, उसके बहुत दूर के बाद श्री बिरजा नामक महानदी है, उसके उसपार एक तरफ कैवल्य नामक एक स्थान है। जहाँ पर सिर्फ आत्मा का चिन्तन करने वाले चेतन भेजे चाते हैं। उसके बहुत दूर और ऊपर अपने परमपिता परमात्मा का सदा साक्षात् विराजने का स्थान परंधाम है। उसको परमव्योम भी कहते हैं तथा त्रिपाद्विभूति भी। वहाँ के ऐश्वर्य तथा सौन्दर्य के असीम आनन्द का भली भाँति कोई वर्णन नहीं कर सकता। उसके बाबत त्रिकालदर्शी महामुनियों के इस प्रकार अनेक तरह के बचन हैं -

''लीला विभूति सीमा सा बेद तोयां महानदी।
जन्म ज्वर बिमुक्तानां यज्ञलं सुख र्धनम्।।''

यानी बिरजा के इस पार जो लोक है उसे लीला बिभूति कहते हैं और बिरजा के उसपार में जो है उसे परमव्योम कहते हैं।

क्रमशः

*‘‘**गो**दुकुचु गुरुडुनु ....बडिपेट्ट पेट्टी’’*

(- अन्नमाचार्य चरित्रा, द्विपदा, पृष्ठ सं ७८, ७९)

शाला में नए शामिल हुए नन्हे छत्र को शिक्षक यह-वह बताने पर पाबंद न कर और नहीं डराते-धमकाते, यह सहज होता है कि वह छत्र को इस पर छोड देता है कि वह अपने साथी विद्यार्थियों की सहज स्थिति देख कर अपने को सहज ही ढंग से पढाई में मगन होने दे। उट्टुकुरू शाला के उस्ताद ने नारायण के विषय में भी वही किया था। उसने नारायण में शिक्षा के प्रति श्रद्धा जगाने वासे, उसके साथ पढने वाले बच्चों को दिखाकर लाड से कहा कि वह भी उन्हीं की तरह पढाई जारी करें। काहे पाठों को जब वह ठीक से न पढाता हो, जाए धमकाया था। डराया भी था। बेंत से मारा भी। थप्पड भी पढें। शरीर को यातना दी। बहुत जतन करने पर भी उसे पढाई में रुचि न जमने से उठक बैठक करवाया और लक्कड से लटका भी दिया। ऐसे कई विधाओं में दंडित होने पर भी नारायणसूरि को पढाई प्राप्त न हुई। गुरुजी की सजाओं का सामना न करते हुए और उन्हें छुटकारा न पाते हुए वह आंसू बहाता था और अपने आप में चिंतित होता था। आखिर नारायणसूरि ने तीव्र निराशा पाकर, गाँव के लोगों का यह कहते हुए सुनकर कि गाँव के चिंतालम्मा ग्राम देवता के मंदिर में बडी बांबी में हाथ डालकर सांप की डसन खाकर मर जाने का निश्चय किया था। आवेश में ऐसा सोचते ही गाँव के चिंतालम्मा के मंदिर में प्रवेश कर गया और बांबी में हाथ पहुँचाया। सर्वकाल सर्वावस्थाएँ जानने वाली चिंतालम्मा, जो कारुण्य की महामूर्ति थी, बालक नारायण की करुणाकलित बाल्य चेष्टा देखी, तो एक मानव स्त्री के रूप में साक्षात्कार देकर, बालक को निरोधा। यदि बालक की वांछा के अनुसार सांप ने डसा हो, तो प्रसिद्ध ताल्लपाका की वंश परंपरा वहीं से रोके जाकर- इतने-से संगीत, साहिती-यजन क्या संभव हुआ होगा? सुप्रभात सेवा से एकांत सेवा तक संपन्न होनेवाला गान कैंकर्य भोग क्या श्रीनिवास को लभता था। ३२ हजार संकीर्तन सौभाग्य तेलुगु लोगों को क्या लभता था। लग-भग पाँच पीढियों की साहिती-विरासत खडा हुआ होगा क्या? इसलिए भूत भविष्य वर्तमानों के ज्ञात उस चिंतालम्मा महादेवी ने उस नारायण बालक को निरोधित किया था। किसलिए आए, उसका मनोगत क्या था जानकर, तात! दुःखित न बन। सकल शिक्षाओं की अधिदेवता सरस्वती देवी के ससुरजी

केशव नाम धरकर, ताल्लपाका में विराजमान है। तमस्स-आप्त-नयय उस श्रीहरि के मंदिर का प्रदक्षिण कर उससे भक्ति से मांग करो, तो तुम्हारे मनोभीष्ट की सिद्धि हो जाएगी।

''अदियुनुगाका ....वल्लभुंडगुचु''

(- अन्नमाचार्य चरित्रा, द्विपदा, पृष्ठ सं ८६, ८७)

तरे वंश में तुझ से तीसरी पुस्त में शाश्वत यशस्वी, महान भक्त, लोकों को प्रीति पहुँचाने वाला, उस वैकुण्ठ के वर के प्रभाव से जन्मित हो जाने वाला है। ऐसा वरदान देखकर अंतर्धान हो गई थी।

इस घटना के तुरंत पश्चात नारायण ताल्लपाका गाँव में जाकर, कोटिसूर्य की कांतियों से प्रकाशमान उस केशव स्वामी का दर्शन दिया था। उस स्वामी के आलय के प्रदक्षिण कर, अपने को विद्या, प्रदान करने की प्रार्थना कर, ''अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेव शरणं ममा'' कहते हुए शरण में गया था। भक्तों के मांगने की ही देरी थी। तुरंत पहाडों की तादाद में वरदान बरसाने वाला। वह कोनेटीराया, अपने वरदान के प्रभाव से जन्मे कारण जन्मों को क्या बिना तारे रहेगा। मांगना ही था कि देव ने तथास्तु कहकर आशीष दिया। उस फल के अनुरूप विद्याओं की उस माता, हाठकगर्भ की रानी, कैटभदैत्य को मर्धा ने वाले महापुरुष की लाडली बहूँ सरस्वती देवी ने नारायण की जिह्वा पर विराजमान हो गयी। वह केवल नारायण को ही नहीं, बल्कि समूचे ताल्लपाका वंश को ही कटाक्षित कर गयी। केशवस्वामी की करुणा से, उस सरस्वती देवी की कृपा से नारायण को विद्याकौशल हाथ में आगया। इसके उपरांत अपने गुरु के कहे हर पाठ का वह कंठस्थ करने लगा। क्रम, शिखा, जटा पाठों को बिना किसी झिझक के वह सुनाने लग गया था। अपने सहचर विद्यार्थी, गुरु शास्त्र ज्ञाता सबके आश्चर्य चकित होते हुए विधान से असने शिक्षा का आर्जन किया था। ऐसा विद्यार्जन कर, सबकी प्रशंसाओं का पात्र बनकर, सर्वज्ञ नाम पाकर ताल्लपाका पहुँच गया।

नारायणसूरि

उतने सर्वज्ञ नामधेय पाये हुए नारायण को नारायणसूरि नाम का बालक उदय हुआ था। वे भी पिता की ही तरह सब विद्याओं में निपुण बन कर, जनता के हाथों सूरि नाम का बिरुद पाया था। सूरि का अर्थ पंडित होता है, नारायणसूरि की पत्नी का लक्कमांबा नाम था। लक्कमांबा पति के मन जानी पत्नी थी। साध्वीमणि और परम भक्तिन थी। यह प्रतीति थी कि ताल्लपाका से पुकार-दूरी पर स्थित माडुपूरु में स्थित माधवमूर्ति (अर्चामूर्ति) इस भाई के बुलाने पर बोलता था। इन पुण्य दंपतियों का दांपत्य लोक में आदर्शप्राय बनकर चलने लगा था। उन पुण्य दंपतियों ने एक दिन, अपने को पुंनाम नरक से विमोचन दिलाने वाले वंशोध्दारक पुत्रक की आकांक्षा करते हुए तिरुमलगिरियों में श्री वेंकटेश्वर की शरण ली। तिरुमल पहाड पहुँच कर श्री स्वामी के दिव्य मंदिर के ध्वजस्तंभ के आगे खडे होकर, 'कुल के उद्धार करनेवाले तनय' को देने का वर स्वामी से माँगा।

''माँगते क्षण इष्टार्थ सब, ...
....बिना झिझक के दे सकने के देवता''

(- अन्नमाचार्य चरित्रा, द्विपदा, पृष्ठ सं १००)

श्रीवेंकटाचलपति ने उस दिन उन्हें सपने में साक्षात्कार देकर, नंदक का बहुकरण किया था। बस उस दंपतियों के आनंद की कोई अवधी न थी। उस दिन उन्हें स्वप्न के रूप में साक्षात्करित हुआ, जो कोटि-कोटि जनमों के धरने पर भी असाध्य विष्णुदर्शन, युग-युगों की तपोसाधना पर भी अलभ्य स्वामी का संदर्शन, भक्त प्रह्लाद, ध्रुव, अंबरीष आदि महाभक्तों को ही सुसाध्य श्रीहरि के निज दर्शन का महाभाग्य उस दिन उन्हें सपने के रूप में लभ्य हो पाया था। दंपतियों में किसी एक को ही स्वप्निल साक्षात्कार का होना याद्दच्छिक होता है, परंतु दोनों को एक ही सपना, वह दैव संकल्प होता है। बस अब क्या था कि अपने सपने के सच होने का आनंद, महा संकल्प, अपने तक के फलित होने की अपार तृप्ति एवं हर्षोल्लासों की गरिमामयी आनंद के साथ अपना गाँव वे पुण्य दंपति पहुँचे।

अन्नमय्या का जनन

श्री वेंकटेश्वरस्वामीजी के अनुग्रह-विशेष के कारण उन पुण्य दंपती नारायणसूरि-लक्कमांबाओं में वैशाखमास, विशाखा नक्षत्र-युक्त शुभ मुहूर्त्त पर, कल्याणकारी तीन ग्रह उच्छ स्थिति में होने पर, राजीवनयन के वरप्रसाद में शक्ति मुनि को पराशर के जन्मित ढंग से श्रीहरि के खड्ग नंदक के अंश से अन्नमाचार्य उदयित हुआ था।

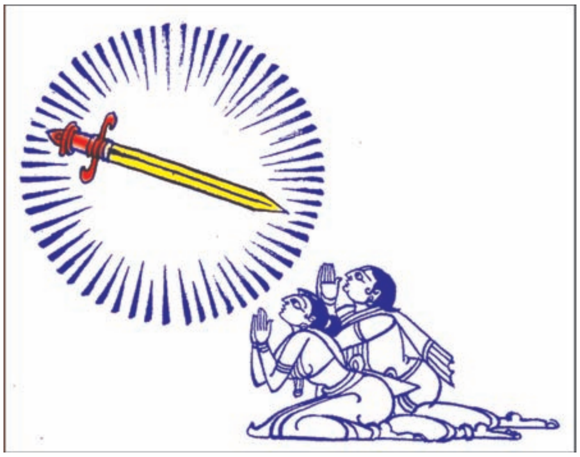

श्री वेंकटेश्वर के वर के प्रभाव-संजनित उस शिशु के जात-शोच-स्मार्त्त आदि कर्मों को शास्त्रोक्त ढंग से करवाया था नारायणसूरि ने। उस शिशु का, भगवंत विष्णु के द्वारा आज्ञापित विधि-के अनुसार, ब्रह्मा का नामांतर 'अन्न' नाम आते ढंग से अन्नमय्या नामकरण किया गया था। बहुत सोचने के उपरांत उपजे होकर, ऊपर से श्रीहरि के वर से प्रसाद के तौर पर जनमने के कारण सूरि दंपति उस बालक को बडे दुलार व लाड-प्यार के साथ पालने लगे गये थे। अन्नमय्या, अन्नप्पा, अन्नमाचार्य, अन्ना, अन्नय्या बुलाते-पुकारते हुए, प्रेम तथा वात्सल्य और ममताएँ झलकाते हुए चूम-पुचकारते थे।

अन्नमय्या का बाल्यकाल

कारण जन्म जो पैदा हुआ था। माता-पिता परम भाग्यवान्, धर्म परायण जो थे। जैसे पुहुप के पनपते ही परिमलित हुए जैसे अन्नमय्या को बाल्यकाल में ही परम सुज्ञान संपदा आदत-सी लभ गयी। नंद वंशज के होने के नाते अन्नमय्या को बचपन से ही आध्यात्मिक चिंतन हाथ आया। उस ज्ञान से माँ के घी का भोजन खिलाने पर न खाता था। वह माँ के हाथ का खाना या बाल भेषज को यह कहके खिलाने पर अनायास खा जाता था कि यह तिरुमलेश का भेजा हुआ दिव्य प्रसाद है। क्या किसी को यह बताना पडेगा जल को यह ढालू है? क्या मधुपाई को यह बताना पडेगा कि पूर्ण विकसित पुष्प के अंदर की शहद की अनोखी रुचि होती है? राजहंस को मंदाकिनी वीचिकाओं पर विचरना किसी के द्वारा सिखाया जाता है? आम के कौंपले चखी कोयल को कोई बतावे सुर क्या होता है? भरी पूनम की रात की चाँदिनी के मर्ज के आस्वादन को चकोर पक्षी को कोई सिखाता जो है? कारण जन्मों को अंबुजोदर के दिव्य पाद अरविंद से संबंधित चिंतन रूपी अमृत पान स्वतः सिद्ध बन करके हाथ आ जाता है। अन्नमय्या का जनम एक भगवत्संकल्प विधि है। अन्नमय्या का गान कीर्त्तन भगवान का लीला विन्यास है। अपने पर पद रचकर, गान कर, अपने को परवशित करने के संकल्प से कलियुग प्रत्यक्ष परमेश्वर सात पहाडवाले के वरदान से, श्रीहरि के संकल्प का विशिष्ट बनकर जन्मित अन्नमय्या को श्रीहरि की भक्ति करना क्या किसी के द्वारा सिखाया जाय?

''एडपका तोट्टेलो ....बसिबिड्डय्यु''

(- अन्नमाचार्य चरित्रा, द्विपदा, पृष्ठ सं १०९, ११०)

झूले में सुला कर कितनी ही देर झुलाने पर, कितनी ही लोरियाँ भी गाओ, लाड-प्यार के भी गीत गाओ, मगर श्री वेंकटेश्वर का नाम न सुनने पर वह कतई न सोता था। कितनी भी पूजाएँ की जाएँ, परंतु कोंडलरायडु (पहाडों का सम्राट) को जोत देने को कहने पर ही शिशु नमस्कार करता था। लोक ज्ञान विहीन नन्हे शिशु को श्री वेंकटेश्वर पर इतनी भक्ति साध्य कैसे हुई? सब पूर्व जनम व परंपरा की सुगन्ध थी। ऐसे कारण जन्म महानुभावों को अपने जनम के कारण को किसी को बताने की आवश्यकता नहीं होती। इसी तरह श्री वेंकटेश्वर का भक्तिरस का आस्वादन अन्नमय्या को कोई सिखाए, इसकी कोई जरूरत नहीं। अन्नमय्या में बाल्यकाल से ही भक्ति स्वतस्सिद्ध और जन्मजात संस्कार भी।

अन्नमय्या का विद्याभ्यास

अन्नमय्या शुक्लपक्ष चन्द्रमा की तरह दिन-दिन प्रवर्ध्दमान् होते हुए पाँचवे वसंत में पाँव रखा था। अपार पांडिती गरिमा के अधिनेता नारायणसूरि ने अपने पुत्रक का उपनयन कराया था। आजन्म सुज्ञान निधि को उसने ब्रह्मोपदेश किया था। बालक अन्नमय्या के हाथ पिताने वेदाध्ययन कराया। अन्नमय्या की जिह्वा पर वैदिक, नैतिक विद्याएँ नाट्य किया था, जिस पर शेषशैलेन्द्र श्री वेंकटेश्वर की कृपाकटाक्ष वीक्षणसंपत्ति काफी पुष्कल ढंग से विराजमान थी। उस छुटपन में ही उसके मन में आयी बातें सब अमृत काव्यबन कर रहीं। गाये गीत सब परम गान परंपरा बनकर चिर स्थायी बन गये। अपनी कविता तथा अपने गान का ताल्लपाका पुर की प्रज्ञा खूब सराहते संदर्भ में बालक अन्नमय्या ने वेंकटपति महादेव पर अचरज के स्तुति गीतों को गाकर जन समूह में अर्पित किया।

घर के लोगों के बताये किसी भी काम को अन्नमय्या अवश्य शिरोधार्य बनाकर करता था। कोई झिझक न दिखाता था। माता-पिताओं के कहे काम बिना किसी बात के वह करता था। सहचर कुटुंब के सदस्यों के कहे काम को भी वह सानंद कर दिखाता था। इस क्रम में, एक दिन, माता-पिता ने गायों को घास काट लाने का काम सौंपा। रैयत का परिवार जो था। अन्नमय्या एक तीखे हँसिये को साथ लेकर, पशुओं के ग्रास घस काट लाने गाँव के बाहर के क्षेत्रों में गया। हाथ में तेजधार हँसिये को लेकर गाँव के घास के क्षेत्रों में पशुओं के ग्रास के लिए जाना तो एक बहाना था। हँसिये से तेज अपने पदों से श्रीहरि को जोर झुलाने के लिए। वह तो श्री वेंकटेश्वर भगवान का निरा संकल्प था।

जो अन्नमय्या पशुग्रास काट लाने गया था, उसने घास काठने के बदले अपनी अंगुली काट ली। हाथ से खून धारापात बह रहा था। हाथ से हँसिया कभी के नीचे गिर गया था। वह निविष्ण रह गया जरा देर कि उसे बाहर की स्पृहा न रही। उस क्षण में उसे न लगा कि वह वहाँ काहे आया? क्या कर रहा है? ऐसा प्रश्न मन में फिरने लग गया। अपने को काम फर्मा ने वाले ये लोग कब के अपने रिश्तेदार? आप स्वयं उनके कब का बंधू है? ये प्रश्न ये उदयित उसके मन में। इस चराचर सारी सृष्टि का वह श्रीहरि ही बंधू है। वह कुछ इस तरह सोच ही रहा था कि वह शेषाद्रि रमण ही अपना माता-पिता, गुरु, दैव, सखा सब कुछ है, तो कहीं दूर से सपने में - सा उसे गोविंद नाम स्मरण कानों में प्रवेश किया था। उसने चारों तरफ उस गोविंद नाम स्मरण के उत्पन्न स्थान को खोजा, तो ताळ्ळपाका की तरफ से राम दंडु की भाँति, कोलाहल ढंग से तिरुमल महानगरी की यात्रा करते हुए भक्तों का सादर निकाय दिखाई पड़ा। उस समूह में कोई तान्पूरा बजा रहा था, तो कोई ताल दे रहा था। कुछ लोग गा रहे थे, तो भक्त बृन्द बडे-बडे मृदंग बजा रहे थे। उन शब्दों की मेल ताल में जोड बनाकर कुछ गवैये रसरम्य गान का आलापन कर रहे थे। सब जोरदार बृंदगान का आलापन करते हुए जा रहे थे तिरुमल। अन्नमय्या को पंक्ति बनाकर, कतार में जाते हुए वे भक्तजन, उस समय, वैकुंठ में श्रीमन्महाविष्णु से आत्मीय मुठ भेड़ करने के महदाशय से प्रस्थान करनेवाले सनकसनंदनादि मुनिप्रवर मालूम पड़े। बस अप्रयत्न ही, अनजाने ही, उस महाभक्त जन समूह का अनुसरण करते हुए चलने लगा है अन्नमय्या।

क्रमशः

भागवत कथा सागर

पुंसवन व्रत

तेलुगु मूल - डॉ.वैष्णवाँघ्रि सेवक दास

हिन्दी अनुवाद - श्री अमोघ गौराँग दास

मोबाइल - ९८२१९१४६४२

पुंसवन व्रत की कथा का वर्णन श्रीमद्भागवतम् के छठे स्कन्ध में किया गया है। कश्यप प्रजापति की दो पत्नियाँ थीं जिनके नाम दिति एवं अदिति थे। अदिति ने देवताओं को जन्म दिया। अदिति के ग्यारहवें पुत्र का नाम इन्द्र था जो स्वर्गलोक के राजा बने। श्री वामन देव के रूप में परम पुरुषोत्तम भगवान स्वयं अदिति के बारहवें पुत्र के रूप में प्रकट हुए। भगवान वामन देव ने राजा बलि से पृथ्वी एवं अन्य लोकों को छीन कर अपने भाई इन्द्र को दे दिया।

कश्यप प्रजापति की दूसरी पत्नि ने दैत्यों को जन्म दिया। लेकिन प्रह्लाद एवं बलि जैसे महान भक्तों ने दैत्यों के परिवार में जन्म लिया था। हिरण्याक्ष तथा हिरण्यकशिपु की मृत्यु के बाद दिति ने उनचास मरूद् नामक पुत्रों को जन्म दिया जिन्हे राजा इन्द्र ने देवताओं का पद प्रदान किया। पुंसवन व्रत का अनुष्ठान इसी घटना से संबन्धित है।

इन्द्र की प्रसन्नता एवं सभी लोकों की रक्षा करने के लिए भगवान विष्णु ने हिरण्याक्ष एवं हिरण्यकशिपु दोनों का वध कर दिया। अपने दोनों पुत्रों की मृत्यु से दिति बहुत दुःखी थी और उसके मन में इन्द्र के प्रति इतनी वैरता उत्पन्न हो गई कि उसने इन्द्र का वध करने वाले एक और पुत्र को जन्म देने की शपथ ले ली। दिति भली प्रकार जानती थी कि अपनी इच्छा पूर्ण करने के लिए उसे अपने पति कश्यप प्रजापति से आशीर्वाद प्राप्त करना आवश्यक था। अतः उसने सावधानीपूर्वक उनकी सेवा करके उन्हे प्रसन्न कर लिया। कश्यप उसे एक वरदान देने के लिए तैय्यार हो गये। तब दिति ने अपनी इच्छा प्रकट करते हुए कहा ''मैंने अपने दोनों पुत्र खो दिये हैं। यदि आप हमें वरदान देना चाहते हैं तो कृपा करके मुझे एक एसा पुत्र प्राप्त करने की अनुमति दीजिये जो इन्द्र का वध कर सके। भगवान विष्णु की सहायता से इन्द्र ने मेरे दोनों पुत्रों का वध कर दिया। कृपया मुझे यह वरदान दीजिये।'' दिति द्वारा एसे वरदान की माँग सुनकर कश्यप भौचक्के रह गये। उन्हे लगा कि वे अकारण ही इन्द्र के वध के पाप से उत्पन्न परिणाम के भागीदार बनेंगे।

तब बुद्धि का प्रयोग करते हुए चतुराई से कश्यप ने अपनी पत्नी दिति को एक एसे वृत का पालन करने के लिए कहा जो वास्तव में विष्णु भगवान को प्रसन्न करने का व्रत है। उन्होने इस प्रकार कहा ''दिति यदि तुम अपनी इच्छा पूर्ण करना चाहती हो तो तुम्हे एक वृत लेना पड़ेगा। तुम्हे उस वृत का कठोरता से पालन करना होगा। तब तुम्हे एक एसा पुत्र प्राप्त होगा जो इन्द्र का वध सके। लेकिन यदि तुमसे वृत के पालन में कोई कमी रह गई तो तुम्हे प्राप्त होने वाला पुत्र इन्द्र का अनुयायी बनेगा।'' उनका उद्देश्य था वैरता को भुलाकर दिति को विष्णु भगवान की सच्ची सेविका बनाना। इस विषय में उन्होंने ''इन्द्रहा देवबान्धवः'' शद्ब का प्रयोग किया। इन्द्र-हा शद्ब से ऐसे असुर का बोध होता है जो इन्द्र को मारने के लिए उत्सुक रहता है। किन्तु इन्द्र-हा शद्ब से इन्द्र का अनुयायी या उसका आज्ञापालक अर्थ भी निकलता है। समान उच्चारण वाले द्वि-अर्थी शद्ब इन्द्र-हादेव-बान्धवः का अर्थ है ''तुम्हारा पुत्र इन्द्र को मारेगा लेकिन वह देवताओं का मित्र होगा।'' जब कोई व्यक्ति देवताओं का मित्र बन चुका तो फिर वह इन्द्र का वध कैसे कर सकता है? कश्यप ने दिति से बात करते समय इन अस्पष्ट शब्दों का प्रयोग किया।

कश्यप प्रजापति ने दिति को पुंसवन के निर्देश देते हुए कहा ''प्रिय दिति! इस व्रत का पालन करते समय तुम न

तो उग्र बनो, न ही किसी को कष्ट पहुँचाओ। न तो किसी को शाप दो, न असत्य बोलो। न तो अपने नाखून या लों को काटो, न हड्डियों तथा खोपड़ी जैसी अशुद्ध वस्तुओं को स्पर्श करो। स्नान करते समय तालाब या पानी में न घुसें, कभी क्रोध न करें और दुष्ट लोगों से न बोले एवं उनका साथ न करें। कभी भी बिना धुले वस्त्र न पहने और पहले धारण की गई माला को कभी न पहने। कभी जूठा भोजन न खायें, देवी काली को चढ़ाया हुआ प्रसाद न खायें और मांस या मछली न खायें। रजस्वला स्त्री द्वारा स्पर्श किया हुआ भोजन न खायें। खुले बालों के साथ घर से बाहर न जायें और आभूषणों से सज्जित हुए बिना तथा शरीर को ठीक से ढके बिना बाहर न निकलें। न गीले पाँव अथवा अपना सिर उत्तर या पश्चिम दिशा में करके सोयें और न ही सूर्यास्त या सूर्योदय के समय सोयें।''

निष्कर्ष रूप में दिति से कश्यप ने कहा ''सदैव स्वच्छ वस्त्र पहनो; चन्दन, सिंदूर एवं पुष्पों आदि शुभ वस्तुओं से श्रृंगार करो तथा गायों, ब्राह्मणों, भाग्य की देवी लक्ष्मीजी एवं भगवान अच्युत का पूजन करो। अनेकों स्त्रियों को उपहार देकर उनसे आशीर्वाद प्राप्त करो एसा सोचते हुए ध्यान लगाओ कि तुम्हारा पति तुम्हारे गर्भ में है। व्रत के इन नियमों का पालन करने से तुम्हारा एक पुत्र उत्पन्न होगा जो इन्द्र का वध करेगा। लेकिन व्रत के पालन में कोई भी त्रुटि होने पर तुम्हारा पुत्र इन्द्र का मित्र बनेगा।''

दिति अत्यंत प्रसन्न एवं व्रत के पालन के लिए दृढ़ संकल्प थी। इन्द्र को दिति द्वारा व्रत के पालन की सूचना प्राप्त हो गई और वे रूप बदलकर दिति की सेवा करने पहुँचे। वे दिति द्वारा व्रत के अनुष्ठान में त्रुटि निकालने के अवसर की प्रतीक्षा में थे। एक बार दिति से व्रत में त्रुटि हुई और अवसर पाते ही इन्द्र भ्रूण को अपने वज्र से नष्ट करने के लिए सूक्ष्म रूप में दिति के गर्भ में प्रविष्ट हो गये। उन्होने भ्रूण (गर्भ) को सात खंडों में काट डाला, लेकिन वे सातों खण्ड जोर-जोर से रोने लगे। इन्द्र ने ''मत रो'' ऐसा कहकर प्रत्येक को पुनःसात खण्डों में काट दिया। तब सभी उनचास खण्डों ने इस प्रकार इन्द्र से प्रार्थना की ''हे इन्द्र! हम तुम्हारे भाई मरूद्गण हैं। तुम हमें क्यों मार रहे हो? तब इन्द्र समझ गये कि वे हानिरहित एवं उनके प्रति मित्रभाव रखने वाले हैं। इन्द्र ने उन्हें नहीं मारा। दिति द्वारा एक वर्ष तक पुंसवन व्रत का पालन करने से वे सभी उनचास पुत्र दिव्य मरूद्गण बने। पूरे एक वर्ष के व्रत से दिति हृदय भी पवित्र हो गया और उसका इन्द्र के प्रति वैरता का भाव समाप्त हो गया। अपने सभी उनचास पुत्रों को इन्द्र के साथ यशस्वी पदों पर देखकर दिति बहुत प्रसन्न हो गयी। तब इन्द्र समेत उनचासों मरूद्गणों ने दिति को प्रणाम किया और स्वर्गलोक की ओर चले गये।

श्रीमद्भागवतम् में पुंसवन व्रत का वर्णन विस्तार में किया गया है। इस व्रत का पालन करने वाले व्यक्ति की सभी इच्छाएँ इसी जीवन में पूर्ण हो जाती हैं। यह व्रत रखने वाली स्त्रियों को समृद्धि, लम्बी आयु वाला अच्छा पति एवं सन्तानें, यश एवं सुखी घर की प्राप्ति होती है। इस व्रत से अविवाहित महिलाओं को अच्छे पति की प्राप्ति होती है तथा पति या पुत्र न होने पर इस व्रत का पालन करने वाली महिलाएँ आध्यात्मिक जगत में पहुँचती हैं। नवजात शिशुओं की मृत्यु हो जाने वाली माताओं द्वारा इस व्रत का पालन करने से उन्हें लम्बी आयु वाली संतानें प्राप्त होती हैं। एसी महिलाएँ अत्यंत धनवान भी बनती हैं। इस व्रत की शक्ति से बीमार व्यक्ति रोगों से मुक्त हो जाता है। इस व्रत का पालन करने से पूर्वज बहुत प्रसन्न होकर सभी इच्छाओं को पूर्ण करते हैं। इस व्रत के पालन से भगवान लक्ष्मी-नारायण अत्यंत प्रसन्न हो जाते हैं। इस प्रकार शुकदेव गोस्वामी ने पुंसवन व्रत के अनुष्ठान की कथा राजा परीक्षित को सुनाई।

(गतांक से)

हरिदास वाङ्मय में श्रीवेंकटाचलाधीश

तेलुगु मूल - श्री एस.नागराजाचार्युलु

हिन्दी अनुवाद - डॉ.एम.आर.राजेश्वरी
मोबाइल - ९४९०९२४६१८

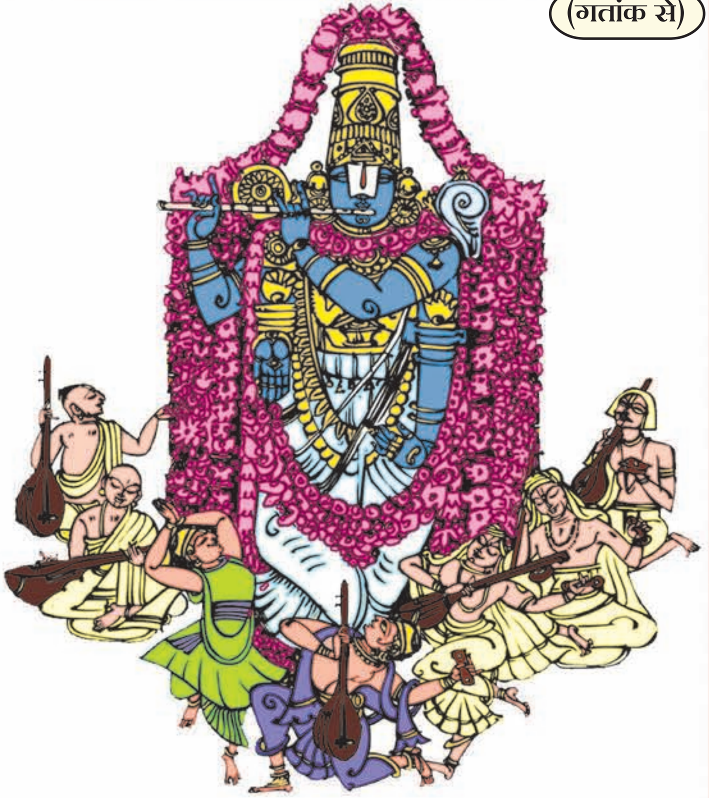

नवविध भक्ति - दास्य भक्ति

श्रीमद्‌भागवत के बताया गया है कि भक्ति नौ प्रकार का होता है -

''श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम्।
अर्चनं वंदनं दास्यं सख्यमात्म निवेदनम्।।
(श्रीमद्‌भागवतम्)

अर्थात् भगवान का नाम सुनना, कीर्तन करना, स्मरण करना, चरण सेवा करना, अर्चना, वंदना करना, बासता लेना, सखाभाव रखना तथा आत्म समर्पण करना- ये सभी भक्ति के प्रकार हैं। इन सभी के उदाहरण आर्षसंप्रदाय में मिल जाते हैं।

''श्री विष्णो श्रवणे परीक्षिद भवद वैयासि संकीर्तने।
प्रह्लाद स्मरणे तदंधि भजने लक्ष्मिः पृथु पूजने।।
अकृर स्त्वभि वंदने कपिपतिर्दासिद स ख्येर्जुनी।
सर्व स्यात्म निवेदने बलिर भूत् कृष्णाप्ति रेषां फलम्।।

नवधा भक्ति में श्रवण के लिए परीक्षित महाराज, कीर्तन के लिए शुकमहर्षि, स्मरण के लिए प्रह्लाद, पादसेवन के लिए महालक्ष्मी, अर्चना के लिए पृथु महाराज, वन्दना के लिए अक्रूर, दास्य भक्ति के लिए हनुमान और सखा भक्ति के लिए अर्जुन तथा आत्मनिवेदन के लिए बलिचक्रवर्ती उदाहरण बनते हैं। नौ प्रकार के भक्तिमार्गों में दास्य भक्ति को अत्यंत श्रेष्ठ भक्ति माना जाता है। यह भक्ति मानव जीवन को आगे बढाने के लिए, लौकिक-पारलौकिक साधना के लिए, ऐहिकामाष्मिक फलप्राप्ति के लिए यह अच्छी वेदी है। श्रीमध्वाचार्यजी का मुख्य उपदेश यही है- 'स्वतंत्र मस्वतंत्रंच द्विविधं सम्मतम्।' दास्य भक्ति का अत्यंत उचित उदाहरण 'कपिपतिद्धास' यानी कपिपति हनुमान बनते हैं। वायुदेव ने भी अपने तीन अवतार क्रमों में हनुमान, भीम, मध्वाचार्य तथा राम, कृष्ण, वेदव्यास के प्रति दास्य भक्ति ही मुखरित किया है! यह निस्संदेहपूर्वक कह सकते हैं कि दास्य भक्ति का मूल पुरुष स्वयंमेव श्रीहरि ही हैं। दास शद्ब से विनय, विवेक, सुशीलता आदि सद्‌गुणों का भाव प्रकट होता है। इतना ही नहीं, यह भगवान को हर स्थान पर दिखाने का साधन भी बनता है। इसीलिए संभवतः भगवान अपनी लीलाएँ प्रकट करते समय 'दास' का वाच्यार्थ लेकर भक्तों में मोद प्रसारित करता है। ''महिदासाभिदोजज्ञे इतरायस्तपोबलात्'' बनकर भगवान मही का दास दिखाई देता है। श्रीमन्नारायण के त्रिधाम में सर्वदा श्री महालक्ष्मी भगवान की दासी बनकर रहती है- ''निरुतनिन्नरमनेय दासि एनिपलु'। कभी-कभार, वह भी सर्वकाल सर्वावस्थाओं में सर्वशक्तिमती बनती है, लेकिन वह आपके सामने बद्धश्रद्धा के साथ आपके सामने आदर भाव ही प्रकट करती है -

''यस्यां अपांगलव मात्रत ऊर्जितासा।
श्रीयत्कटाक्ष बलवत्यजितंनमामि।।''

आदित्य पुराणांतर्गत 'वेंकटाचलमाहात्म्यम्' में श्री महालक्ष्मी की एक बलवती इच्छा हम देखते हैं। समस्त देवता जो सेवा भगवान के प्रति समर्पित करते हैं, उन समस्त सेवाओं को वह अकेली ही करना पसंद करके दिखाई देती है। उस माता का स्थान, भगवान का वक्षःस्थल है, लेकिन वह भगवान के प्रति दास्य भक्ति ही रखना पसंद करती है।

'तत्सुखंतु रमाद्दृष्ट्वा मेने शेषैक भाजनम्।
अहमेवानु भोक्ष्यामि मत्पतेरंग संगजम्।।

सर्वाण्य भूद्रमादेवी देवा यानंत तेजसे।
भोग्य वस्तु स्वरूपेण तव सेवाभिलाषिणी।।

महानंदाम्बुधे मग्ना रमते सारमात्वया।
रमसेरमयैवत्वं, वैकुंठादिषु धामसु।।'

श्री मध्वाचार्य ने एक ऐसा सजीव चित्र खडा करते है जिसने श्री महालक्ष्मी अपने पतिदेव के कैसे प्रेमपूर्वक उनको देखती है, कैसे राग भावयुक्त होकर उनकी सेवा करती है। इनका अक्षर चित्र हमारे मानस पटल पर निस्संदेहात्मक अंकित हो ही जाते हैं।

'इंदिरा चंचलापांग नीराजितम् मंदरोद्धारिहृत्योद्भुजा भोगिनम्' - श्री महालक्ष्मी देवी अपने कटाक्षात्मक लोचनों से स्वामी को आरती समर्पित करती है, पति के बाहुबंधन रूपी पिंजडे में कैद हो जाती है। इस अद्भुत दृश्य को पुरंदरदास ने इस रूप में व्यक्त किया -

कोटि कोटि भृत्यरिरलु हाटकांबरन सेवे।
साटि इल्लदे माडिपूर्ण नोटदिंद सुखिसुतिहलु।।

छत्र चामर व्यजन पर्यंक पात्र रूपदल्लि निंतु।
चित्र चरित नाद हरिय नित्य सेवे माडु तिहलु।।

....
....

पुरंदर विठलन्नसेविसुतिहलु
एनुधन्यलोल कुमियेंथामान्यलो।।

असंख्य ऋषि मुनिगण, ब्रह्मरुद्र (ब्रह्मरुद्रादि वंद्यंतम्) आदि उस स्वामी की वन्दना करने के लिए इंतजार में खडे हैं, उससे पहले ही लक्ष्मीदेवी उनसे अधिक वन्दना करती हुई सेवा भी कर रही है, सुखानुभाव प्राप्त कर रही है। वह भगवान को सेवा छत्र-चामर तथा अन्य पूजा सामग्री का प्रयोग करती हुई कर रही है। एसी अद्भुत गुणशाली भगवान हरि की नित्यप्रति, निर्विराम सेवा करनेवाली लक्ष्मी कितनी ही धन्यशाली देवी है। पुरंदरदासजी कहते हैं - वह कितनी ही सौभाग्यशाली है कि भगवान उनकी निरंतर सेवा स्वीकार कर रहा है।

लक्ष्मी देवी के साथ-साथ ब्रह्मादिदेवता भी ऐसी सेवापरायणता को अपनी दास्य भक्ति के द्वारा दिखाया है। चतुर्मुखी (ब्रह्म) भी यही कहते हैं - 'तवदासोस्मिकेवलम्', 'जन्म प्रभृतिभिः दासोस्मि केवलम्।' भविष्य के ब्रह्म (हनुमान) अपनी दास्य भक्ति को 'दासोहं कोसलेंद्रस्य रामस्य क्लिष्ट कर्मणा' कहते हैं।

हनुमान ने शत्रु बृन्द के बीच रावण के सामने यह कहा- 'मैं कोसलाधीश श्रीरामचंद्र का दास हूँ।' भक्त शिरोमणि प्रह्लाद ने भी यही भाव प्रकट कियी - 'भूमन् भ्रमाभिवदमे तव दास्य योगम्'। इन्होंने भी दास्यभक्ति को ही विशेष महत्व दिया।

''दासनमाडिको एन्न स्वामी सासिरनामदवेंकट रमण''

पुरंदरदासजी, श्री वेंकटेश्वर स्वामी से अपने को दास बनाने के लिए प्रार्थना की। विजयदासजी ने 'दास दास दासर दास्यव कोडु' कहकर अपने को दासों के दास बनाने के लिए प्रार्थना की। गोपालदासजी ने 'दास नेंतेंद म्येते घासि माडुवरे' कहकर स्वामी से प्रश्न किया कि हे स्वामी! आप मेरे स्वामी हो लेकिन मुझे जैसे दास की परीक्षा क्यों लेना चाहते हो! जगन्नाथदास जी ने 'दासोहं तव दासोहं' कहकर अपनी दास्य भक्ति को मुखरित किया। कनकदास स्वामी ने 'दास दास दासरमनेय दासियर मगनानु' कहा- ''मैं दासके, दासके, दासके घर में मैं दासपुत्र हूँ।'

क्रमशः

भगवद्गीता और नौजवान

यह पृथ्वी कर्मों का स्थान है!

तेलुगु मूल - डॉ.वैष्णवांघ्रि सेवक दास
हिन्दी अनुवाद - श्री अमोघ गौराँग दास
मोबाइल - ९८२१९१४६४२

पृथ्वी लोक, जहाँ हम वर्तमान समय में रहते हैं, एक कर्मस्थल है। उच्च-लोक आनंद भोग करने का स्थान हैं। निम्न-लोक कष्ट एवं दण्ड प्राप्त करने का स्थान हैं। हम उच्च-लोकों एवं निम्न-लोकों के मध्य में स्थित पृथ्वी लोक पर रहते हैं। यहाँ निरन्तर सुख एवं दुःख दोनों प्राप्त होने के कारण कर्मों की प्रक्रिया चलती रहती है। अतः इस लोक में कर्म करना ही सभी जीवों का उद्देश्य, सिद्धांत एवं लक्ष्य है। यहाँ केवल मनुष्य ही नहीं अपितु पशु, पक्षी, रेंगने वाले जीव आदि सभी सदैव किसी न किसी कार्य में व्यस्त रहते हैं। वे पल भर के लिये भी किसी कर्म के बिना नहीं पाये जाते हैं। यह स्वाभाविक है। सभी पशु या पक्षी विभिन्न कार्यों में व्यस्त रहते हैं और कार्य-विहीन नहीं पाये जाते हैं। लेकिन अनेकों मनुष्य कई बार बिना किसी कार्य के व्यर्थ बैठे मिलते हैं। सभी मनुष्यों के लिये उनके गुणों के अनुसार वेदों में नियत कार्य बताये गये हैं। उन कार्यों के अनुसार मनुष्यों को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र नामक चार वर्णों में विभाजित किया गया है। यह वर्ण पद्धति स्वयं भगवद्गीता में प्रतिपादित की गई है। विवेक एवं बुद्धि के प्रयोग द्वारा सभी मनुष्यों एवं अन्य जीवों के लिए कल्याणकारी कार्यों को करनेवाला व्यक्ति ब्राह्मण कहलाता है। ब्राह्मणों के निर्देशन में नागरिकों की रक्षा करने एवं उन पर शासन करने वाला व्यक्ति क्षत्रिय कहलाता है। ब्राह्मणों की कृपा एवं क्षत्रियों के संरक्षण में गौ-रक्षा, कृषि एवं व्यवसाय करने वाला व्यक्ति वैश्य कहलाता है। उपर्युक्त तीन प्रकार के व्यक्तियों की सेवा करके स्वस्थ एवं आनंदमय जीवन बिताने वाला व्यक्ति शूद्र कहलाता है। इन चारों प्रकार के व्यक्तियों को अपने नियत कर्मों में लगना-चाहिए।

लेकिन कर्म क्यों करना चाहिए? इस सुंदर प्रश्न का एक ही उत्तर है। हमारे पास जो उपलब्ध नहीं है उसे पाने के लिए कर्म करने की आवश्यकता होती है। अतः लोग विभिन्न उपलब्धियों के लिए कार्य करते हैं। परन्तु भगवान के लिए यह सच नहीं है। भगवान की शक्ति से ही संपूर्ण जगत के निर्मित होने के कारण यहाँ पर सब कुछ उनके ही आधिपत्य में है। श्रीईशोपनिषद के प्रथम श्लोक के अनुसार ''ईशा वास्यमिदं सर्व यत्किञ्च जगत्यां जगत्- अर्थात इस जगत में सभी जीवों एवं वस्तुओं के स्वामी स्वयं भगवान हैं।'' फिर भी जब भगवान इस जगत में प्रकट होते हैं तो वे विभिन्न कार्यों में व्यस्त रहते हैं। यह अत्यंत आश्चर्यजनक है!

''हे पृथापुत्र! तीनों लोकों में मेरे लिए कोई भी कर्म नियत नहीं है, न मुझे किसी वस्तु का अभाव है और न ही आवश्यकता है। तो भी मैं नियत कर्म करने में तत्पर रहता हूँ।'' (भगवद्गीता ३.२२)

''क्योंकि यदि मैं नियत कर्मों को सावधानी पूर्वक न करु तो हे पार्थ! यह निश्चित है कि सारे मनुष्य मेरे पथ का ही अनुगमन करेंगे।'' (भगवद्गीता ३.२३)

यह शद्ध भगवद्गीता में स्वयं परम पुरुषोत्तम भगवान श्रीकृष्ण ने कहे हैं। भगवान श्रीकृष्ण ने कहा कि उन्हे कुछ भी प्राप्त करने की इच्छा नहीं है कुछ भी प्राप्त करने की आवश्यकता भी नहीं है, फिर भी वे विभिन्न

कार्यों को करने में व्यस्त रहते हैं। यह कितना सुंदर संदेश है! अतः सभी मनुष्यों एवं विशेषतः युवाओं को फलता-पूर्वक कार्यों को करने में व्यस्त होना चाहिए। कार्य में जुटने के लिए ऊँचे लक्ष्य, उत्साह, तत्परता, दृढ़ निश्चय, बुद्धिमत्ता एवं आत्मविश्लेषण की आवश्यकता होती है। इसके लिए आलस्य एवं टालमटोल की आदतों से मुक्त होना आवश्यक है। सभी को अत्यधिक इन्द्रिय भोग से बचना चाहिए। इन निर्देशों का पालन करने वाला व्यक्ति शांतिमय तथा स्वस्थ एवं समृद्धिपूर्ण लंबा जीवन व्यतीत कर सकता है। नौकरी से सेवानिवृत होने के पश्चात लोग सोचते हैं कि अब उनके सभी कार्य पूर्ण हो गये हैं और उन्हें कोई कर्म करने की आवश्यकता नहीं है। उन्हें सोचना चाहिए जब स्वयं भगवान सदैव कार्यों में इतनी तत्परता से व्यस्त रहते हैं तो मनुष्यों के बारे में क्या कहना? आयु, शिक्षा, शक्ति, समय एवं स्थान के अनुसार सभी व्यक्तियों को उचित कार्यों को करने की योजना बनानी चाहिए। इस विषय में 'जहाँ चाह वहाँ राह' एक महत्वपूर्ण कहावत है। ''मैं आजीवन भगवान, स्वयं एवं अन्यों को आनंद प्रदान करने वाले कार्यों में व्यस्त रहूँगा'' - एसा दृढ़ विश्वास के साथ निश्चय करने वाले व्यक्ति को अपनी इच्छा पूर्ण करने के लिए सदैव अद्भुत अवसर अवश्य प्राप्त होते हैं। केवल एसे व्यक्ति ही लंबा एवं आनंदमय जीवन व्यतीत करते हैं। अतः सभी बुद्धिमान लोगों को भगवद्गीता के मार्ग पर चलने वाले अनुभवी व्यक्तियों के निर्देशन में अपने सभी कार्यों को भगवद्गीता से उन्मुख करते हुए उन कार्यों में जुटकर लगना चाहिए।

तिरुमल में दर्शनीय क्षेत्र

स्वामिपुष्करिणी : मंदिर के निकट स्थित यह तालाब अतिपवित्र है। यात्री मंदिर में प्रवेश करने के पूर्व इसमें स्नान करते हैं। आत्मा व शरीर की शुद्धि के लिए यहाँ स्नान करना श्रेष्ठ है।

आकाश गंगा : मंदिर की उत्तरी दिशा में लगभग ३ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

पापविनाशनम् : मंदिर की उत्तरी दिशा में ५ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

वैकुंठ तीर्थ : मंदिर की ईशान दिशा में लगभग ३ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

तुम्बुरु तीर्थ : मंदिर की उत्तरी दिशा में १६ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

भूगर्भ तोरण (शिलातोरण) : यह अपूर्व भूगर्भ शिलातोरण मंदिर की उत्तरी दिशा में १ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

ति.ति.दे. बगीचे : देवस्थान के आध्वर्य में सुंदर व आकर्षक बगीचे लगे हुए हैं, जिनमें विशिष्ट पेड व पौधे मिलते हैं।

आस्थान मंडप (सदस हाल) : यहाँ धर्म प्रचार परिषद् के आध्वर्य में धार्मिक कार्यक्रम मनाया जाते हैं। जैसे भाषण, संगीत-गोष्ठी, हरिकथा-गान एवं भजन।

श्री वेंकटेश्वर ध्यान ज्ञान मंदिर (एस.वी. म्यूजियम्) : इस कलात्मक सुंदर भवन में एक म्यूजियम्, ध्यान केंद्र तथा छायाचित्र-प्रदर्शिनी आयोजित है।

ध्यान केंद्र : तिरुमल के एस.वी. म्यूजियम् एवं वैभवोत्सव मंडप में स्थित ध्यान केंद्रों में भगवान पर ध्यान केंद्रित कर भक्त शांति को प्राप्त कर सकते हैं।

श्री पेरुंदेवी समेता श्री करिवरदराज स्वामी मंदिर - सत्रवाडा

तमिल मूल - श्री वी.ओ.सुरेश
हिन्दी अनुवाद - श्री के.रामनाथन
मोबाइल - ९४४३३२२२०२

श्रियः कांताय कल्याणनिधये निधयेऽर्थिनाम्।
श्रीवेंकटनिवासाय श्रीनिवासाय मंगलम्।।

तिरुपति-तिरुत्तणि प्रधान सड़क पर तिरुपति से करीब ५० किलो मीटर दूरी पर दक्षिण में नगरी नामक गाँव है। इस गाँव से ४ किलो मीटर पश्चिम की ओर जाने पर कुसस्तलानदी के उत्तरी किनारे पर सत्रवाडा नामक गाँव के बीच में एक अति सुंदर मंदिर है, जहाँ श्री पेरुंदेवी समेता श्री करिवरदराजस्वामी विराजित है।

स्थलपुराण

इस गाँव की पश्चिमी दिशा में मुनिपल्ले नामक एक छोटा गाँव था। उस गाँव में अनेक साधु गण भगवान की भक्ति में लीन होकर तपस्या - यज्ञ आदि करते थे। एक बार करी नामक एक राक्षस साधुओं को अनेक कष्ट दे रहा था और उनके यज्ञों का नाश कर रहा था। हमारे पुराण बताते हैं कि भगवान सदा भक्तों की सहायता में समय पर आकर मदद करने वाले हैं और भक्तों के रक्षक हैं। यह तो सर्व विदित हैं कि भगवान ने भक्त प्रह्लाद की रक्षा में मानव और शेर के मिलेरूप में नरसिंह अवतार के रूप में अवतरित होकर हिरण्यकशिपु नामक असुर का वध किया था। यहाँ भी भगवान ने साधुगणों की प्रार्थना पर आकर असुरों का वध किया और यही मंदिर में विराजित हुए। इस गाँव के तीनों ओर, याने करीम पेड़, नगरी, तेरणी नामक तीनों गाँवों में करियमाणिक्य पेरुमाल के नाम पर अवतरित होकर भक्तों को अपने दिव्यदर्शन दे रहे हैं।

श्री पेरुंदेवी समेता श्री करिवरदराज पेरुमाल विराजित यह गाँव सत्रवाडा नाम से बुलाया जाता है। लगभग १५०० साल पहले विजयनगर साम्राज्य के महाराजा श्रीकृष्णदेवराय के शासन काल में वेंकटेश कुमार राजा ने कार्वेट प्रांत का शासन किया था। तब कार्वेट प्रांत के अधीन सत्रवाडा गाँव भी था। उस जमाने में सत्रवाडा आस-पास के गाँवों में प्रधान गाँव था। कार्वेट प्रांत शासन के समय में इस गाँव को सत्रवाडा के नाम से भी बुलाते थे। इस पर प्राप्त शिलालेख को हम मंदिर के अंदर देख सकते हैं। इस गाँव के पश्चिम

में बहती कुसस्तलानदी में साधुगण स्नान कर के मंदिर में आते और भगवान की पूजा-प्रार्थना में पूर्णानंद पाते थे। भगवान भी उस साधु और भक्तों की भलाई के लिए करी नामक राक्षस का वध करके उस गाँव को एक पवित्र स्थान बना दिया था।

उत्सव पूजा नियम

इस मंदिर में भगवान को वैखानस आगम नियम के अनुसार पूजा होती है। इस मंदिर में होने वाले उत्सव में चैत्र पूर्णिमा का उत्सव अधिक प्रसिद्ध है। चैत्र पूर्णिमा के दिन भगवान श्रीदेवी, भूदेवी सहित कुसस्तलानदी में आकर अपने भक्तजनों को दर्शन देते हैं। यह उत्सव लगभग १५३ सालों से बड़े डाट-बाट से हो रहा है। इसके अलावा कांचीपुरम श्री वरदराज पेरुमाल ब्रह्मोत्सओं के समय पर यहाँ भी श्री वैखानस आगम नियम पर गरुडसेवा होता है। इस मंदिर में श्री पेरुंदेवी समेता श्री करिवरदराजस्वामी, श्री पेरुंदेवी, श्री आण्डाल, श्री हनुमान, श्री चक्रत्ताल्वार आदि उत्सव मूर्ति के रूप में भक्तजनों को अपने दर्शन देते हैं।

श्री नक्षत्र उत्सव

इस मंदिर में श्री नक्षत्र उत्सव भी मनाए जाते हैं। हर रविवार श्री वीरहनुमानजी को और हर शुक्रवार श्री करिवरदराज पेरुमाल को उत्सव मनाए जाते हैं। इसके अलावा एकादशी, रथसप्तमी, भाद्रपद, मार्गशीर्ष, कार्तिक आदि महीनों में विशेष पूजा होती हैं। श्री वीरहनुमानजी के जन्मदिन, संक्रति जैसे दिनों में विशेष रूप से अभिषेक और अलंकार सहित पूजा होती हैं। साथ-साथ हरदिन भगवान की अर्चना और आराधना होती हैं।

अन्य मंदिर

इस मंदिर के प्रधान मूर्ति श्री करिवरदराज स्वामी पश्चिम की दिशा में अपना दिव्य दर्शन देते हैं। श्री पेरुंदेवी, श्री गोदादेवी आदि के लिए अलग मंदिर हैं। भगवान की मूर्ति के सामने गरुड़ाल्वार विराजित हैं। भगवान के गर्भगृह के पास ही आल्वार आचार्य के लिए मंडप बनाया गया है। इस मंडप में श्री विखनसाचार्य, श्री सेनैमुदलियार, श्री नम्माल्वार, तिरुमंगैयाल्वार, श्रीरामानुज, मनवालमामुनी आदि के विग्रह विराजित हैं। भगवान के गर्भगृह के बाहर उत्तर दिशा में लग-भग ८ फीट ऊंचे श्री वीरहनुमानजी के भव्यरूप का मंदिर है, जहाँ वेद क्षीण दशा में वहाँ अपना दर्शन देते हैं। इस मंदिर में छोटे बच्चों को बालारिष्ट दोष से बचाने केलिए उनके मुंह पर मंदिर के पानी का छिड़काव विशेष रूप से किया जाता है। बच्चों को श्रीहनुमानजी के रूप जटित डालर उनके गले में बांधा जाता है।

इसके अलावा करीब ५० साल पहले कांची कामकोटि पीठाधिपति जगतगुरु श्री परमाचार्य स्वामीजी ने इस स्थान के पश्चिम में कार्वेटनगर में विराजित श्री वेणुगोपाल पेरुमाल मंदिर में दर्शन करने आए थे। वे इस मंदिर में ६ महीने तक ठहरे, उस समय श्री परमाचार्य स्वामीजी ने सत्रवाडा में अपना दिव्य दर्शन देने वाले श्री पेरुंदेवी समेता श्री करिवरदराजस्वामी के मंदिर में भी आकर प्रार्थना की थी। इस प्रकार यह स्थान एक महान जगत् गुरु के पाद धूल स्पर्श के कारण और भी पवित्र बन गया। ति.ति.दे. ने इस मंदिर को दि. २६-०२-२००९ के दिन अपने आधीन में लिया। दि. १७-०७-२००० में शुक्रवार के दिन तिरुमल तिरुपति देवस्थान के तत्कालीन श्री श्री श्री छोटे जीयर स्वामीजी की अध्यक्षता में इस मंदिर में कुंभाभिषेक भी बड़े पैमाने पर संपन्न हुआ। इस मंदिर में विराजित भगवान के दर्शन केलिए और श्री वीरहनुमानजी के दर्शन के लिए आस-पास के गाँवों से अनेक भक्त बड़ी संख्या में लगातार आते हैं और प्रार्थना करके भगवान की कृपा के पात्र बनते हैं।

श्री पेरुंदेवी समेता श्री करिवरदराज परब्रह्मणेनमः!

श्री प्रपन्नामृतम्

(१२वाँ अध्याय)

मूल लेखक - श्री स्वामी रामनारायणाचार्यजी

प्रेषक - श्री रघुनाथदास रान्दड

मोबाइल - ९९००९२६७७३

(गतांक से)

श्रीरामानुजाचार्य द्वारा पत्नी का परित्याग

एक दिन तैलाभ्यंग के लिए उस कला में निपुण किसी श्रीवैष्णव को श्रीरामानुजाचार्य ने अपने घर पर बुलाया और उस भूख-प्यास के कारण कृशकाय और दुर्बल देखकर दयार्द होकर कहा कि-यदि कुछ भोजन की सामग्री बची हो तो उसे दे दो। उनकी पत्नी ने उनकी उपेक्षा करते हुए कहा कि-अब अवशिष्ट भोजन सामग्री नहीं है। पत्नी पर अविश्वास करते हुए जब उन्होंने जाकर चुपके से भोजनालय में देखा तो वहाँ बहुत अधिक सामान अवशिष्ट पड़ा था। इस बात पर वे पत्नी पर बहुत अधिक क्रुद्ध हुए। पत्नी उनकी उपेक्षा करती हुई उन्हें उसी हालत में छोड़कर जल लाने के लिए कुँए पर चली गयी।

दैवयोग से उसी कुँए पर श्रीमहापूर्णाचार्यजी की पत्नी भी जल लाने के लिए आयीं थीं। जबकि दोनों स्त्रियाँ अपने-अपने घड़े को शीघ्रतापूर्वक कुँए से बाहर निकाल रही थी, उसी समय श्रीमहापूर्णाचार्य स्वामीजी की पत्नी के जलघट से उछलकर कुछ जल के छींटे श्रीरामानुजाचार्य की पत्नी के घड़े पर पड़ गये। इस पर पूल्या श्रीमहापूर्णाचार्य स्वामीजी की पत्नी को उन्होंने बहुत कुछ जली-कटी सुनाते हुए कहा कि- ''जाति, कुल, शील, विद्वत्ता और धन, सम्पत्ति सब कुछ में तुम हम से हीन हो, अतः तुम्हारे घड़े के छींटों से मेरा घड़ा अशुद्ध हो गया।'' यदि देखा जाय तो श्रीमहापूर्णाचार्य स्वामीजी की ही तरह उनकी पत्नी भी रक्षकाम्बा के लिए पूज्या थीं। अतः उन्हें उनके घड़े के छीटों के पड़ जाने से खुशी ही प्रकट करनी चाहिए थी। श्रीरामानुजाचार्य तो श्रीमहापूर्णाचार्य स्वामी को श्रीपादतीर्थ आदि प्राप्त करने में अपना अहोभाग्य मानते थे। दोनों के इस अप्रासांगिक कलह को सुनकर श्रीमहापूर्णाचार्य स्वामी अधिक ही दुःखी हुए और यह सोचकर कि इसे सुनकर श्रीरामानुजाचार्य को अत्यन्त ही कष्ट होगा, सकुटुम्ब उसी दिन उन्होंने श्रीरंगम के लिए प्रयाण कर दिया।

विद्वद्वरेण्य श्रीरामानुजाचार्य अपने नित्य-नियमानुसार उनके घर पर गये तो गुरु के परिवारविहीन गृह को देखकर दुःखी हुए। पूछने पर समीपस्थ लोगों ने बताया कि-यद्यपि उन्हें भी वास्तविक कारण तो पता नहीं, फिर भी उनकी तथा उनकी पत्नी में कलह हो गया था, सम्भवतः उसी से दुःखी होकर वे श्रीरंगम चले गये हैं। इस समाचार से दुःखी श्रीरामानुजाचार्य घर में आकर पत्नी पर अत्यधिक क्रुद्ध हुए और बोले- ''मैं तुम्हारे इस असह्यापचार को कभी भी सहन नहीं कर सकता। अतः तुम अपने पिता के घर चली जाओ। मेरे हृदय में तुम्हारे लिए कोई स्थान नहीं हैं, मैं तुम्हारा त्याग कर रहा हूँ।'' पति के उग्र क्रोध को देखकर रक्षकाम्बा भयभीत होकर काँपने लगी, जिसे देखकर भगवान रामानुजाचार्य का क्रोध तो कुछ शान्त हो गया किन्तु वे पत्नी को अपनी साधना में एक विघ्न मानते हुए उसके परित्याग का उचित और सरल उपायान्तर सोचने लगे।

एक दिन जब श्रीरामानुजाचार्य भगवत्परिचर्या में संलग्न थे तो एक क्षुधित ब्राह्मण वहाँ आकर उनसे भोजन की याचना करने लगा। यहा सोचकर कि-आया हुआ अतिथि भगवान के समान होता है, बोले कि-मैं भगवदर्चा में संलग्न हूँ, घर जाने में अक्षम हूँ। तुम मेरी पत्नी से जाकर कहना कि-श्रीरामानुजाचार्य ने मुझे भोजन के लिए भेजा है। उस ब्राह्मण ने वैसा ही किया तो श्रीरामानुजाचार्य की धर्मपत्नी ने उसे तिरस्कृत करते हुए कहा-मेरे पास आपको भोजनार्थ देने के लिए कुछ भी नहीं है अतः आप उन्हीं दयासागर से जाकर भोजन माँग लें जिन्होंने आपको भेजा है। भूखा ब्राह्मण लौटकर सारा वृत्तान्त दुःखी मन से श्रीरामानुजाचार्य को सुनाकर पुनः भोजन की याचना करने लगा। भगवान रामानुजाचार्य ने तब अपने ससुराल की ओर से एक कृत्रिम पत्र लिखकर तथा हरिद्रा फल आदि देकर बोले कि वह जाकर उनकी पत्नी से कहे कि वह उसकी मायके (नैहर) से आया है उसे ले जाने के लिए फल, वस्त्र, पत्र आदि लाया है। ब्राह्मण ने ऐसा ही किया। अपने पति की इस चाल से अनभिज्ञ रक्षकाम्बा ने इस बार उस ब्राह्मण पर विश्वास कर लिया और उससे अपने माता-पिता का कुशल क्षेम पूछती हुई वस्त्र, फल, हरिद्रा और पत्र को ले लिया। प्रत्युत्तर में ब्राह्मण ने कहा कि उसके छोटे भाई की शादी है अतः उन लोगों ने उसे बुलाया है। रक्षकाम्बा ने उस ब्राह्मण को सविधि भोजन कराया। तदनंतर सारे वृत्तान्तों से अपने को अनभिज्ञ बतलाते हुए श्रीरामानुजाचार्य औपचारिक ढंग से सारे वृत्तान्त को ब्राह्मण से सुन, पुनः जाकर अपनी पत्नी से बोले- ''इस समय तुम्हें अपने मनोनुकूल सभी वस्त्राभूषणों को लेकर पितृगृह को अवश्य ही चले जाना चाहिये। मैं कुछ दिनों के बाद आऊँगा।'' पति की आज्ञा पाकर रक्षकाम्बा इच्छित दास-दासियों के साथ पितृगृह को चली गयीं।

निर्वाध्य भगवद्भक्ति की प्राप्ति की इच्छा से श्रीरामानुजाचार्य उपर्युक्त रहस्यात्मक ढंग से झूठे आश्वासन द्वारा अपनी सती-साध्वी पत्नी को उसके पितृगृह में भेजकर बीतराग हो स्वयं सन्यासाश्रम स्वीकार करने की क्रियाओं में तल्लीन हो गये।

।। श्रीप्रपन्नामृत का १२वाँ अध्याय पूर्ण हुआ ।।

क्रमशः

धर्म प्रचार में 'सप्तगिरि' मासिक पत्रिका का योगदान

- श्री एम.अजित शर्मा
मोबाइल - ७०९५२८६३२९

सुदूर प्राचीन समय से ही समाज के उत्थान के लिए आलय तथा धर्म बहुधा उपयोगी सिद्ध हुए। अत्यंत प्राचीन यानी काल सीमा से अतीत जो धर्म, सनातन धर्म कहा जाता है, उसका प्रचार व प्रसार निर्बाध प्रवाहमान रह कर, सर्वकाल सर्वावस्थाओं में प्रामाणिक व प्रासंगिक बन कर आगे की दिशा पकड रहा है। धर्म के कक्ष में रह कर ही मानव सुखमय जीवन बिता सकता है। जीवन के विकास के लिए उपयोगी सूक्ष्म तथा स्थूल धार्मिक विषयों की गंभीर चर्चाएँ आलयों से ही निःसंदेहपूर्वक, निष्कंटक रूप से प्रारंभ हुआ करती थी।

मुद्रण व्यवस्था के आगमन के साथ-साथ 'वाक्' को 'अक्षर' रूप देने के लिए सुदृढ़ साधन का प्रबंध किया गया। पत्रिकाओं का पठन सामाजिक विकास का एक अक्षुण्ण माध्यम बना। इसी नेपथ्य में तिरुमल-तिरुपति-देवस्थान की 'सप्तगिरि' मासिक पत्रिका की रूपकल्पना की गई। यह सनातन धर्म प्राचर के लिए एक सक्षम वस्तु वाहिका बनी।

अखिलांड कोटि ब्रह्माण्ड नायक श्रीवेंकटेश्वर स्वामी के वैभव का वर्णन कभी हो ही नहीं सकता। उसे अक्षर रूपी सीमाकृतियों में बाँधना असंभव है। लेकिन श्रीपति के लिए समर्पित कैंकर्यो, नैवेद्य, उत्सव, ब्रह्मोत्सव आदि का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करने के लिए अक्षर ही नींव बनते हैं। वास्तव में 'सप्तगिरि' पत्रिका एक ऐसी समाचार वाहिका है जो पाठक भक्तों को सप्ताचलाधीश की महिमाओं को बताता है। इस पत्रिका में अन्यान्य विषयों का प्रस्ताव व विस्तृत समाचार मिलता है। उदाहरणार्थ, 'सप्तगिरि' जो तेलुगु, तमिल, हिन्दी, कन्नड, अंग्रेजी, संस्कृत भाषाओं में अलग-अलग मुद्रित होते हैं, इनमें श्रीशैलवासी के श्रीपद्मावती मैया के, ति.ति.दे. के अधीनस्थ तिरुपति तथा विश्व के अन्यान्य प्रांतों में स्थित मंदिरों के, इतिहास, वैभव, उत्सव, महिमाओं, तत्संबंधी भक्तों के अनुभव, अभिप्राय, अनुभूति आदि विशेषताओं का विवरण प्रस्तुत होते हैं।

हिन्दू धर्म संबंधी हमारे जितने पर्व, जितनी मेलाएँ, जितने व्रत, पूजादिक होते हैं, उन सबका समाचार इस पत्रिका में छपते हैं। पाठकों को आकृष्ट करने, इसके लेखक भी ध्यान रखकर अपने मनोभाव बड़े रोचक ढंग से प्रस्तुत करते हैं। भगवान बालाजी के भक्त वृन्द जैसे आलवारों के जन्मदिन, तेलुगु प्रांत के, कन्नड प्रांत के, उत्तर भारत के अनन्य भक्तों के जन्म दिन संबंधी, साक्षात् वैकुंठवासी श्रीमहाविष्णु तथा उनके परिवार देवताओं के अवतारोत्सव, श्रीपति के आभरणों से अवतरित भक्तवरेण्यों के जन्मवृत्तांत तथा उनके महिमा प्रदर्शन संबंधी वृत्तातों का वैभव इसमें पढ़ने को मिलते हैं। सात पहाडों में जितने तीर्थ देखने को मिलते हैं, उन सबकी जानकारी, वहाँ पर समर्पित पूजा, नैवेद्य, कैंकर्य आदि भी मालूम होते हैं। वास्तव में 'सप्तगिरि' मासिक पत्रिका को एक पवित्र ग्रंथ के समान मान सकते हैं। इसमें नित्य पारायण स्तोत्रों का भी उल्लेख किया जाता है। 'सप्तगिरि' उपयुक्त आध्यात्मिक विषयों की संचायिका ही नहीं बल्कि, पाठकों के स्वास्थ्य की रखवाली करनेवाली कोष भी है क्योंकि यह आयुर्वेद की जड़ी-बूटियों संबंधी ज्ञान भी रखता है। इस पत्रिका में ज्योतिष शास्त्र ने भी अपने लिए स्थान ग्रहण कर लिया है। और तो और, यह पुस्तक ऐसी कहानियाँ भी सामने रखती है जिनको स्कूल के बच्चे अपने-अपने स्तर की लेखनी चल कर लिखते हैं। ति.ति.दे. जहाँ-जहाँ पर विशेष कार्यक्रमों का आयोजन करती है, उनका ब्यौरा आकर्षक चित्रों के संग प्रस्तुत किए जाते हैं। ति.ति.दे. के अधिकारीगण व कर्मचारी जितना परिश्रम करते हैं, उन सबकी जानकारी प्रस्तुत करती है सप्तगिरि। पुस्तक को आकर्षक बनाने के लिए, आजकल रंगीन चित्रों से पुस्तक के बीच के कागजों को सजाया जा रहा है। इस पुस्तक में रामायण, महाभारत,

भागवत् आदि से संबंधित पहेलियाँ भी सामने रखी जाती हैं जो बडे रोचक होते हैं।

हाल ही में, यानी दो-तीन महीनों से 'सप्तगिरि' पत्रिका के साथ-साथ एक छोटी पुस्तिका 'बालसप्तगिरि' संलग्न किया जा रहा है। यह छोटे बच्चों के लिए है जो आध्यात्मचेताओं का परिचय चित्रों तथा उनके बीच के संवादों से प्रस्तुत करता है। इसकी परिकल्पना के पीछे यही सोच है कि बच्चे, छुटपन से ही आध्यात्मिक चिन्तन करें तथा विज्ञान के साथ-साथ वास्तविकज्ञान (भगवान) से परिचय पायें तथा उसी के बल पर पलें-बढें।

ति.ति.दे. की ओर से प्रकाशित होने वाली 'सप्तगिरि' तथा 'बालसप्तगिरि' मासिक पत्रिका बच्चे, बडे, बूढों को आकृष्ट कर रही है और सभी स्तर के पाठकों को अनगिनत विषयों की जानकारी दे रही है। सच्ची, इसके अक्षर नयनों से अंदर घुसकर मानस पटल पर बैठ जाती हैं और दैवीयशक्ति को पाठकों में जागृत कर, उन्हें सच्चे मार्ग में ले जा रही है। आज तक जिस भांति यह पत्रिका दिन-दिन प्रवृद्धमान रही है, आशा करते हैं कि इसकी आयु लंबी रहे तथा निर्बाध चलती रहे। 'वेंकटाद्रि समंस्थानं ब्रह्माण्डे नास्ति किंचन, वेंकटेश समो देवो, नभूतो न भविष्यति'- इस उक्ति के वैभव का साक्षी 'सप्तगिरि' पत्रिका है। ''सर्वेजनाः सुखिनो भवंतु। समस्त सन्मंगलानि संतु।''

आइये, संस्कृत सीखेंगे..!!

आयोजक - महामहोपाध्याय समुद्राल लक्ष्मणय्या, श्री किरणभट

हिन्दी में निर्वहण - डॉ.सी.आदिलक्ष्मी
मोबाइल - ९९४९८७२१४९

पाठ - ३

संयुक्ताक्षराणि (संयुक्ताक्षर):-

क् + क = क्क	क् + य = क्य	ख् + प = ख्प	ग् + न = ग्न
क् + ख = क्ख	क् + र = क्र	ख् + य = ख्य	ग् + ब = ग्ब
क् + ट = क्ट	क् + ल = क्ल	ख् + र = ख्र	ग् + भ = ग्भ
क् + त = क्त	क् + व = क्व	ख् + व = ख्व	ग् + म = ग्म
क् + थ = क्थ	क् + ष = क्ष	ग् + ग = ग्ग	ग् + य = ग्य
क् + न = क्न	क् + स = क्स	ग् + घ = ग्घ	ग् + र = ग्र
क् + प = क्प	ख् + थ = ख्थ	ग् + द् = ग्द	ग् + ल = ग्ल
क् + म = क्म	ख् + न = ख्न	ग् + ध = ग्ध	ग् + व = ग्व

भक्तों की सेवा में तिरुमल तिरुपति देवस्थान

आपन्निवारण गोविंदा...!

- श्री वाई.वी.सुब्बारेड्डी,
न्यास-मंडली के अध्यक्ष, तिरुमल तिरुपति देवस्थान

कोरोना पंजा की वजह से पूरी दुनिया थर-थर होने का जटिल समय यह है। मानवों के लिए सबसे बड़ी चुनौती देनेवाली यह कोरोना का कराल नृत्य संसार के बहुत सारे देशों को हिला रहे हैं। इस आपदा के दौरान तिरुमल तिरुपति देवस्थान, जिसे अब दुनिया के सबसे बड़े धार्मिक संगठन के रूप में जाना जाता है। और कई धार्मिक गतिविधियों के साथ-साथ 'मानव सेवा ही माधव सेवा' की सूक्ति को अनुसरण करते हुए 'सर्वेजनास्सुखिनो भवन्तु' के अनुष्ठानों को पालन कर रहे हैं।

ति.ति.दे.पूर्वावलोकन

कोरोना विपत्तियों को पहले ही प्रत्याशा के साथ उचित कार्रवाई करने में भक्तों को किसी भी परेशानी से दुःख न होने की तरह ति.ति.दे. जो कार्य किए गए है, अच्छे परिणाम मिले है। इसके अंतर्गत १७, मार्च से टाइम स्लॉट जारी किए गए। वैकुंठ क्यू कांप्लेक्स-I, II में भक्तजन प्रतीक्षा न करने की तरह सीधे जाने की अनुमति दी गई। पहाड पर हर दो घंटों में एक बार सभी प्रदेशों को शानिटैजेशन से सफाई करवाई गई। १९, मार्च को ति.ति.दे. अधिकारियों ने घोषणा की कि वे आं.प्र. के माननीय मुख्यमंत्री श्री वाई.एस.जगन्मोहन रेड्डीजी के निर्देश पर ति.ति.दे. मंदिर में भक्तों के प्रवेश को निलंबित किए हैं। २०, मार्च की सुबह अर्जित सेवा भक्तों के लिए वी.आई.पी. ब्रेक दर्शन करवाकर, पहाडी पर मौजूद सभी भक्तों को जहाँ तक संभव हो, वहाँ तक दर्शन करवाकर पहाडी से नीचे भेजा गया। उस दिन से तिरुमलेश्वर की सभी सेवाओं को अलगाव में आगमोक्त से ति.ति.दे. संचालन किया जा रहा है। लॉकडाउन के समय तिरुमलेश्वर को दर्शन करने की चिंता न होकर हर दिन श्री वेंकटेश्वर भक्ति चैनल (यस्वी.बी.सी) के माध्यम से तिरुमलेश्वर के कल्याणोत्सव और तिरुचानूर की माताजी श्री पद्मावतीदेवीजी के कल्याणोत्सव को प्रत्यक्ष प्रसारण कर रहा है। इसी तरह लाखों लोगों के साथ ओंटिमिट्टा श्री सीतारामस्वामीजी के कल्याणोत्सव कार्यक्रम को मंदिर परिसर में ही सीमित करके श्री वेंकटेश्वर भक्तिचैनल के माद्यम से प्रत्यक्ष रूप से प्रसारित करवाकर भक्तजनों को दिखाया गया।

रोगों की रोकथाम याग

कोरोना बूम के दौरान समस्त मानव जाति को इस आपत्ति से बचने केलिए ति.ति.दे. २६ से २८ मार्च तक श्री श्रीनिवास शांत्योत्सव सहित धन्वंतरी महायाग को तीन दिनों के लिए तिरुमल में रहे धर्मगिरि वेदविज्ञान पीठ में भव्य रूप से आयोजित किया गया। कोरोना निवारण के लिए श्रीनिवास वेद मंत्र आरोग्य जप-यज्ञ को तिरुमल में स्थित आस्थान मंडप में १६, मार्च से लेकर २५, मार्च तक वैभव रूप से निर्वहण किया गया। इसमें आन्ध्रप्रदेश, तेलंगाना, तमिलनाडु और कर्नाटक राज्यों के वेद पंडितों ने श्रीनिवास वेद मंत्र स्वास्थ्य जप-यज्ञ मंत्र और चतुर्वेद, पंचशाखाओं को पठन किए गए। इस लोक को भलाई को दृष्टि में रखकर, सभी लोगों के लिए बेहतर स्वास्थ्य की कामना एवं भगवान से प्रार्थना करते हुए योगवाशिष्ट, श्रीधन्वंतरी महामंत्र पठन कार्यक्रम को तिरुमल में नादनीराजनम के मंच पर १०, अप्रैल को प्रारंभ किया गया।

भक्त भी इस में भागीदार होना विशेष है। यस्वी.बी.सी. प्रत्यक्ष प्रसार करने की वजह से पंडितों ने जो मंत्र बताये थे, उन मंत्रों को भक्तों ने भी टी.वी. के सामने बैठकर पठन कर रहे हैं।

मानव सेवा ही माधव सेवा

कोरोना वायरस प्रसार के निवारण में लॉकडाउन में विपरीत परिस्थितियों को सामना करनेवाले तिरुपति एवं आस-पास के क्षेत्रों में हजारों बेघर और प्रवासी श्रमिकों के लिए १,२०,००० भोजन पैकटों को अन्नप्रसाद विभाग के द्वारा तैयार करके दे रहे हैं। इसके साथ-साथ गोशालाओं में हजारों गायों को संरक्षण कर रहे है ति.ति.दे.। तिरुपति में लगभग ५०० गली कुत्तों को भी भोजन की आपूर्ति कर रहे हैं। रास्ते पर घूमनेवाले पशुओं के लिए तिरुपति में स्थित अलिपिरि लिंक बस स्टैंड के पास तात्कालिक पशुशाला का आयोजन किया गया। ति.ति.दे. हरदिन ३ मैट्रिक टन पशुओं के लिए चारा एवं ३०० किलो की दाना वितरण कर रहा है। तिरुमल तिरुपति देवस्थान आयुर्वेदिक अनुसंधान के अंतर्गत कोरोना को निवारण के लिए पाँच प्रकार की दवाएँ बनाई है। इसमें 'रक्षज्ञ धूप' (कीटकनाशक), 'पवित्रा' (हाथ साफ करने का द्रव), 'गंडूषक' (गरलदवा), 'निंबनस्यम्' (नाक में डालनेवाली बूंदों की दवा), 'अमृता' (इम्यून-बूस्टिंग पिल्स) तैयार किया गया। लॉकडाउन की वजह से भोजन की आपूर्ति में भूख से पीड़ित निराश्रयों के लिए अन्नप्रसाद तैयार करनेवाले ति.ति.दे. कर्मचारियों को पहले दवाएँ दी गई। २०० रसोइयों को पांच प्रकार के अलग-अलग दवाएँ वितरित की गई।

कोरोना पर युद्ध के लिए १९ करोड रुपये

'स्विम्स' अस्पताल को पूर्ण रूप से कोरोना अस्पताल की तरह परिवर्तन किया गया। श्री पद्मावती महिला मेडिकल कॉलेज को राज्य स्तरीय कोरोना अस्पताल के रूप में बनाया गया था। ति.ति.दे. ने वेंटिलेटर और अन्य चिकित्सा आपूर्ति की खरीद के लिए १९ करोड रुपये मंजूर किए गए है। कोरोना सहायता के लिए ति.ति.दे. के अधीन में रहे तिरुचानूर में स्थित श्री पद्मावती निलयम् वैसे ही तिरुपति में स्थित विष्णुनिवासम्, श्रीनिवासम्, माधवम् विश्रांति गृह एवं दूसरी धर्मशाला को चित्तूर जिले प्राधिकरण को ति.ति.दे. ने सौंप दिया।

यस्वी.बी.सी. के माध्यम से गतिशीलता

तिरुमल तिरुपति देवस्थान श्री वेंकटेश्वर भक्ति चैनल के द्वारा श्री वेंकटेश्वर कल्याणोत्सव एवं पहाड पर होने वाले होम आदि कार्यक्रमों को प्रत्यक्ष प्रसारण कर रहे हैं। वैसे ही कोविड-१९ नियंत्रण करने के तरीकों पर विशिष्ट निर्देशों के साथ कार्यक्रमों को बनाकर प्रसार कर रहे हैं।

नित्यकल्याणम पच्चतोरणम

'नित्यकल्याणम पच्चतोरणम' तेलुगु भाषा का मुहावरा है। श्रीनिवास भगवान से प्रार्थना करते हुए, महर्षियों के द्वारा दिखाए गए वैदिक मार्ग से साफ-सुथरा का पालन करते हुए सामाजिक दूर का आचरण करते हुए 'गोविंदेति सदा स्नानम्... गोविंदेति सदा जपम्... सदा गोविंद कीर्तनम्' जैसे हमारे जीवन को सरल के रूप में बदलाते हुए, भगवान के द्वारा दिए हुए इस जीवन के परमार्थ को जानकर इस कठिन समय में एकता के साथ खडे होंगे। सप्तगिरीश की कृपा से कोरोना पर विजय प्राप्त करेंगे।

ॐ नमो वेंकटेशाय!

Edited and Published on behalf of T.T.Devasthanams by **Dr.K.Radha Ramana, M.A., M.Phil, Ph.D.,** Chief Editor, T.T.D. and Printed at T.T.D. Press by **Sri R.V.Vijaykumar,** B.A., B.Ed., **Dy.E.O.,** (Publications & Press), T.T.D. Press, Tirupati-517 507.

अंतराष्ट्रीय विपत्ति माने कोरोना वायरस व्याप्ति को रुकने के अंतर्गत जारी किये हुए लॉकडाउन के समय में निराश्रय आत्रवासी, सडक के जानवरों को ति.ति.देवस्थान की ओर से आहार के वितरण करते हुए दृश्य।

SAPTHAGIRI (HINDI) ILLUSTRATED MONTHLY Published by Tirumala Tirupati Devasthanams
printing on 25-05-2020. Regd. with the Registrar of Newspapers under "RNI" No.10742.
Postal Regd.No.TRP/11-2018-2020, Licensed to post without prepayment
No.PMGK/RNP/WPP-04/2018-2020